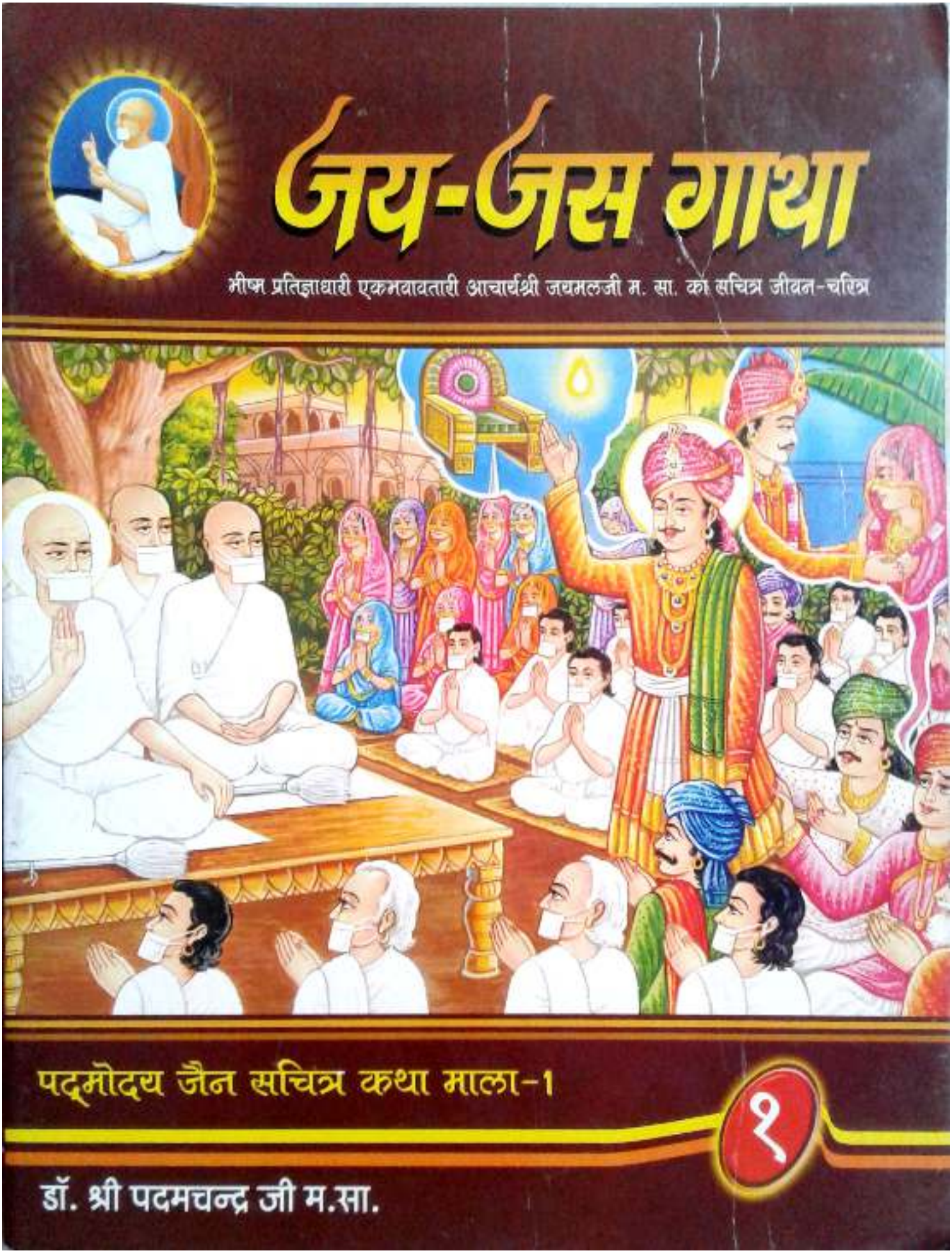

Scanned by CamScanner

एक बात आपसे भी....

महान् आत्माएँ प्राणियों का कल्याण करने के लिए धरती पर जन्म लेती हैं। ये महापुरुष अपने संकल्प बल से समाज में नयी चेतना जाग्रत करते हैं। इतिहास के पृष्ठों पर ऐसे यशस्वियों के नाम अमर रहते हैं। ऐसे ही एक महान युगपुरुष का जन्म विक्रम की अठारवीं शताब्दी में हुआ। वह अमर यशस्वी नाम है—**एक भवावतारी आचार्यसम्राट् श्री जयमल जी म. सा.।**

एक भवावतारी आचार्यश्री जयमल जी म. सा. जम्बू कुमार की तरह महान् वैराग्य के धनी थे। अक्षय पुण्यों के निधान थे, तो धन्नाजी की तरह पग-पग पर सफलता और विजय उनके चरणों को स्पर्श करती हुई दिखाई देती है। उनकी विनम्रता और गुरु भक्ति गौतम की तरह अद्भुत थी। मुझे लगता है प्राण ऊर्जा का ऐसा अद्भुत स्रोत, चैतन्य का चरम विकास सामान्य मानव काया में होना एक अलौकिक बात है।

एक भवावतारी आचार्यसम्राट् श्री जयमल जी म. सा. के जीवन के घटना प्रसंग बालकों में संस्कार निर्माण के लिये अत्यन्त उपयोगी हो सकते हैं। चित्रकथा के माध्यम से बाल-मस्तिष्क इन घटनाओं को शीघ्र समझ सकता है।

इस पुस्तक में सरल भाषा एवं रोचक शैली के माध्यम से आचार्यश्री के दिव्य जीवन की कुछ खास-खास घटनाओं को 'जय ध्वज' के आधार पर चित्रों सहित प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस चित्रकथा के प्रथम भाग में जन्म से लेकर दीक्षा तक के प्रसंगों को लिया गया है। अगले कुछ भागों में उनके विराट् संयममय जीवन प्रसंगों को संग्रहित करने का प्रयास किया जायेगा।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि एक भवावतारी आचार्यसम्राट् श्री जयमल जी म. सा. का पवित्र चरित्र जो भी पढ़ेगा, उसके जीवन में परिवर्तन की लहर अवश्य उठेगी और वह अन्तर्मुखी बनकर जीवन को त्याग, संयम, तप की ओर गतिशील करने का प्रयत्न करेगा। इसी विश्वास के साथ........!

—मुनि डॉ. पद्मचन्द्र

❑ पुस्तक : पद्मोदय जैन सचित्र कथा माला–1 (जय जस गाथा)

❑ लेखक : अणुप्पेहा ध्यान प्रणेता डॉ पदमचन्द्र जी म. सा.

❑ संस्करण : प्रथम, मई 2004

❑ मूल्य : बीस रूपये मात्र

• प्रकाशक : •

श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय प्रकाशन ट्रस्ट

बैंगलोर (कर्नाटक), चेन्नई (तमिलनाडू)

• चित्रांकन एवं प्रिंटिंग : •

पद्मोदय प्रकाशन

A-7, अवागढ़ हाउस, अंजना सिनेमा के सामने, एम.जी. रोड, आगरा-2 दूरभाष : (0562) 2151165.

Scanned by CamScanner

पद्मोदय जैन सचित्र कथा माला-1

जय-जस गाथा

आशीर्वाद प्रदाता

आचार्य प्रवर श्री शुभचन्द्र जी म. सा.

संयम शिरोमणि पण्डित रत्न
उपाध्याय श्री पार्श्वचन्द जी म. सा.

लेखक

जयगच्छीय दशम पट्टधर आचार्यप्रवर
श्री लालचन्द्र जी म. सा. के सुशिष्य
डॉ. श्री पदमचन्द्र जी म.सा.

सम्पादक

संजय सुराणा

प्रकाशक : श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय प्रकाशन ट्रस्ट, बेंगलोर

Scanned by CamScanner

अनुक्रम

लाम्बिया रियासत के मेहता-पुत्र

3

जननी द्वारा शुभ स्वप्न-दर्शन

4

दुष्कर दोहद पूर्ण हुआ

6

जन्मजात जय-विधायक-पुत्र-रत्न

7

युद्ध में मिली विजय : पुत्र का नामकरण

10

यह होनहार बालक धर्म धुरंधर होगा

11

संसार में मन रमाने का प्रयास : विवाह

14

आचार्य श्री के प्रथम भव्य दर्शन

16

ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण

18

याचना—दीक्षा के लिए

20

द्वन्द्व—अनुरक्ति और विरक्ति के बीच :

23

जयमल बने कठोर अभिग्रहधरी

27

दीक्षा ने खोला—संयम-द्वार

28

Scanned by CamScanner

जय-जस गाथा

लाम्बिया रियासत के मेहता-पुत्र :

तीन सौ वर्ष पूर्व राजस्थान में जोधपुर राज्य में मेड़ता के समीप बारह गाँवों की एक रियासत थी 'लाम्बिया'। वहाँ पर ठाकुर मानसिंह जी का शासन था। रियासत के कामदार समदड़िया कर्णराज जी अत्यन्त योग्यतापूर्वक रियासत के सभी कार्यों की देखरेख करते थे।

कर्णराज जी ने काफी लम्बे समय तक पद का दायित्व निभाया। एक दिन मेहता जी अपने अनुज मोहनदास जी के साथ महाराज के समक्ष उपस्थित हुए और निवेदन किया—"अब मैं बूढ़ा हो चला हूँ। अब मुझे अपने दायित्वों से मुक्ति प्रदान करने की कृपा कीजिये। महाराज ! मैं चाहता हूँ कि आप मेरे स्थान पर मोहनदास को नियुक्त करें। यह मुझसे आयु में तो छोटा है, बुद्धि-कौशल में मुझसे भी बढ़-चढ़कर है। फिर मैं भी किसी न किसी रूप में शासन की सेवा अंतिम साँस तक करता ही रहूँगा।"

ठाकुर मानसिंह जी ने कर्णराज जी की बात मानते हुए मोहनदास जी को राज्य के मेहता पद पर सुशोभित कर दिया। मोहनदास जी ने भी ऐसी प्रतिभा दिखाई कि ठाकुर साहब का दिल बाग-बाग हो गया। मोहनदास जी ने शीघ्र ही कर्णराज जी का अभाव विस्मृत करा दिया।

मेहता मोहनदास जी की पत्नी महिमा दे के आगमन से परिवार की महिमा को चार चाँद लग गये थे। कुछ समय पश्चात् प्रथम पुत्र की प्राप्ति हुई। पुत्र का नाम रिद्धिमल रखा गया।

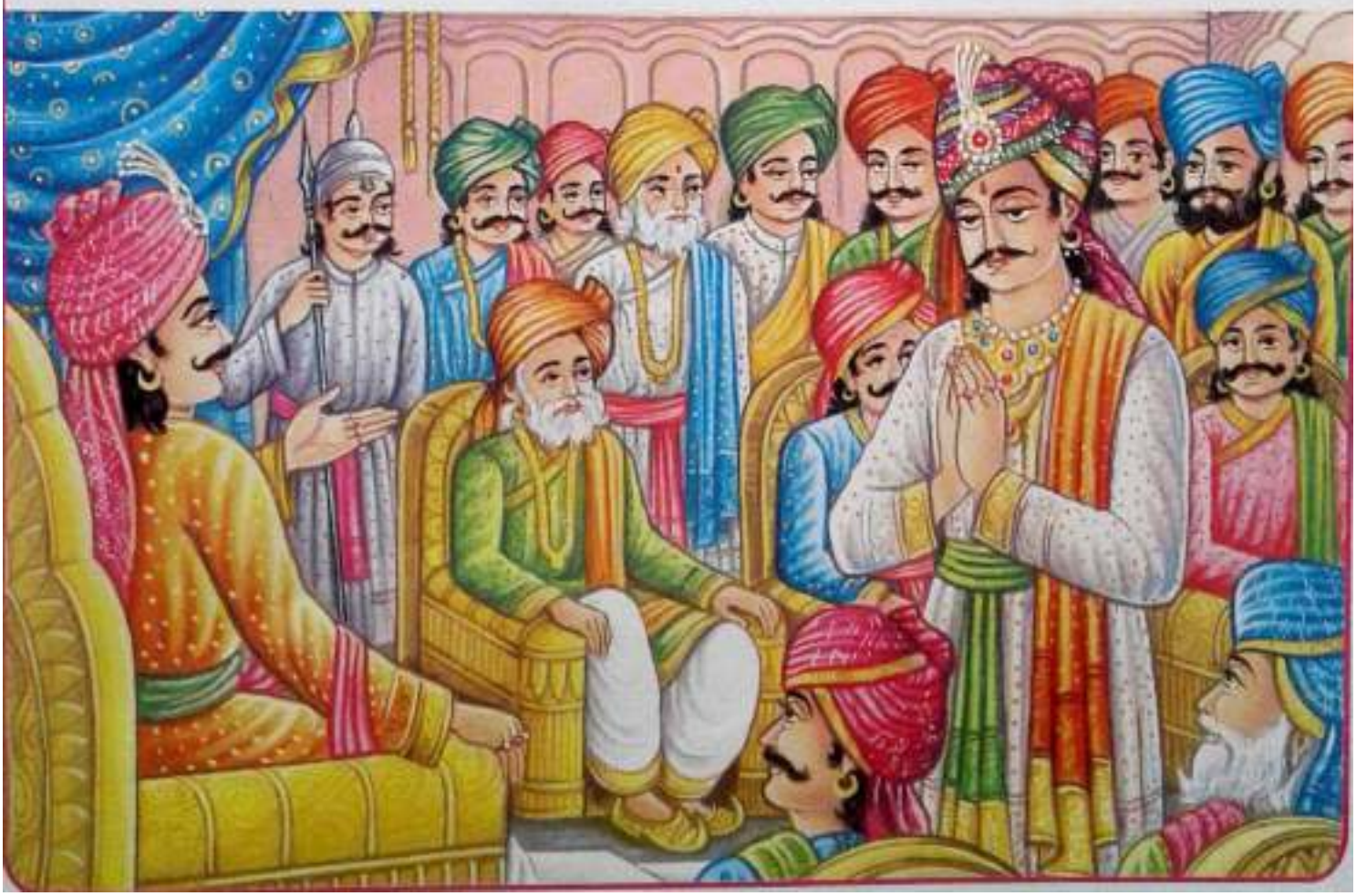

Scanned by CamScanner

जननी द्वारा शुभ स्वप्न-दर्शन :

एक सुहावनी-सी भोर में महिमा दे ने जब शैया-त्याग किया तो वह असीम प्रसन्न थीं। पतिदेव के लिए दूध लेकर जब कक्ष में पहुँची तो मोहनदास जी ने पूछ ही लिया—''क्या बात है, आज तो बड़ी खिली-खिली सी लग रही हो ! कुबेर का खजाना हाथ लग गया है क्या ?''

''हो सकता है, उससे भी किसी उत्तम वस्तु के मिलने का योग हो।'' महिमा दे ने उल्लास छिपाने का असफल प्रयास करते हुए कहा—''नाथ ! सपनों का राजा देखा है आपकी राजरानी ने, अति सुन्दर मधुर सपना।''

महिमा दे ने पलकें मूँद लीं और स्वप्न का वर्णन करने लगीं। मानो पुनः स्वप्न देख रही हों।

''मैं गहरी निद्रा में थी, तभी मुझे सहसा ऐसा लगा, जैसे मेरी आँखें खुल गयीं और मैं खिड़की से बाहर आकाश में चन्द्रमा को देखने लगीं। देखते ही देखते चन्द्रकिरण में से एक सलोनी, लुभावनी आकृति उभरने लगी। उस दिव्य आकृति को निहारते-निहारते मेरे हृदय में असीम वात्सल्य का ज्वार-सा उठने लगा। कुछ पलों के पश्चात् वह सौम्य आकृति मेरी ओर अग्रसर होने लगी। कुछ समीप आकर वह आकृति चन्द्रकिरण में केसरी सिंह की बन गयी और मेरे मुख में प्रविष्ट हो गयी।

Scanned by CamScanner

तभी मेरी नींद खुल गयी। जागकर मैंने अनुभव किया कि मेरे मन में अद्‌भुत आनन्द और अपार शान्ति व्याप्त हो गयी है।''

मेहता जी ने देखा कि स्वप्न का वर्णन कर चुकने पर पत्नी के मुखमंडल पर अनायास ही उज्ज्वल हास बिखर गया है। सुखद आश्चर्य में डूबे हुए मेहता जी ने प्रसन्नता के साथ कहा—''ऐसे शुभ स्वप्न बड़े दुर्लभ होते हैं। जब कोई परम पुण्यशाली जीव माँ के गर्भ में आता है, तो वह माँ ऐसे शुभ स्वप्न देखती है। महिमा दे ! तुम्हारा आनन्दित होना स्वाभाविक ही है।'' यह कहते हुए मेहता जी के अधरों पर भी मुस्कान आ गयी। महिमा दे का तो मन मयूर ही नाच उठा।

दिन बीतते चले....! थोड़े ही दिनों में मोहनदास जी को ऐसा लगा कि वे जिस काम में हाथ डालते थे उसमें उनकी विजय होती है। क्या राज-काज में, क्या व्यापार में और क्या आसपास के वातावरण में; सर्वत्र उनका जयजयकार होता था। अप्रत्याशित सफलता चरण चूमती थी।

मोहनदास जी यूं तो राज-दरबार में कामदार थे, किन्तु उनका स्थान धीमे-धीमे राजा के मुख्यमंत्री जैसा बन गया था। लाम्बिया ठाकुर मानसिंह जी उदावत हर बात में उनकी सलाह लेकर ही चलते थे। उनकी सलाह से लाम्बिया की प्रगति होती थी और मानसिंह जी की भी कीर्ति बढ़ती थी। ठाकुर के राणीवास (रनवास) में भी मोहनदास जी विशेष रूप में सलाह-मशविरा के लिए बुलाये जाते थे।

Scanned by CamScanner

दुष्कर दोहद पूर्ण हुआ :

गर्भवती महिमा दे की रुचि धर्म-ध्यान और व्रत आदि में बढ़ती चली गयी। एक दिन उनके मन में 'दोहद' उत्पन्न हुआ कि वे नदी के निर्मल जल में स्नान करें और रमणीक वन-उपवन में विचरण करें।

पत्नी की यह इच्छा जानकर मेहता जी को चिन्ता होने लगी, इसकी पूर्ति टेढ़ी खीर थी। चैत्र मास था और लाम्बिया की नदी सूखी पड़ी थी। दोहद को कैसे पूरा किया जाए ? तभी समाचार मिला मेड़ता की तपधारी नदी में बाढ़ आ गयी है। यह नदी भी वर्ष भर सूखी रहती थी। वर्षा में ही कुछ पानी आ जाता था। अचानक असमय ही पानी का आ जाना असंभव का संभव हो जाना था। पुण्यशाली जीव की माता का दोहद अपूर्ण नहीं रह सकता था।

महिमा दे ने तपधारी नदी में स्नान किया। दान आदि भी किया। तटवर्ती वन-उपवनों में उन्होंने भ्रमण किया। दुष्कर दोहद भी पूर्ण हुआ।

दोहद पूर्ति से उत्साहित माता की धार्मिक प्रवृत्तियाँ बढ़ने लगीं। दम्पत्ति मुक्तहस्त दान और धर्माराधना में संलग्न रहने लगे।

Scanned by CamScanner

जन्मजात जय-विधायक—पुत्र-रत्न :

पुण्यशाली जीव के जगत् में पदार्पण का समय निकट आ गया था। भाद्रपद मास का शुक्ल पक्ष। संवत्सरी महापर्व की आराधना के पश्चात् महिमा दे का प्रसवकाल नजदीक आया। उस चाँदनी रात्रि में महिमा दे अपने कक्ष में प्रसव-पीड़ा से कराह रही थी। मेहता जी कक्ष के बाहर चिन्तित, अस्थिर अवस्था में टहल रहे थे।

उस शान्त रात्रि में सहसा हवेली के प्रांगण में शोर होने लगा। सेवक ने सूचना दी—''नगर के गूजरवाड़ा के निवासी आए हैं। बेचारे रक्षा के लिए गुहार कर रहे हैं। डाकुओं ने उनका क्षेत्र घेर लिया है। डाकू बलपूर्वक उनकी गायें ले जाने पर आमादा हैं।''

मेहता जी की भुजाएँ फड़क उठीं। तनी हुई भौंहों के साथ उन्होंने गर्जना की—''मोहनदास मेहता के रहते उनकी यह हिम्मत ! उनकी करतूत का मजा उन्हें चखाकर ही रहेंगे।'' लपककर खूँटी से तलवार उतारी और झपटकर वे आगे बढ़ गये।

महिमा दे के कक्ष के बाहर आकर उनके कदम थम गये। विचित्र अन्तर्द्वन्द्व था—'घर को देखूँ या रियासत की जिम्मेदारी पूरी करूँ ? किसी की भी अनदेखी संभव नहीं..... क्या करूँ.....क्या छोड़ूँ.....!!'

Scanned by CamScanner

तभी कक्ष के भीतर से महिमा दे की प्रेरक वाणी आयी—''यहाँ से निश्चिंत होकर कर्त्तव्य मार्ग पर सिधारिये स्वामी ! कोई यह न कहने पाए कि महिमा दे के लिए मेहता जी ने कर्त्तव्य से मुँह मोड़ लिया। विजय पताका फहराते हुए आप शीघ्र ही लौटेंगे—हमारा यह पक्का विश्वास है।''

मेहता जी का विचलित मन स्थिर हुआ। तलवार की मूठ पर पकड़ दृढ़ हो गयी। दुगुने वेग से वे आगे बढ़ गये। मेहता जी के पराक्रम से डरे-दुबके अपराधी रियासत में सर न उठा पाते थे। उनको घरेलू समस्या में उलझा जानकर डाकुओं ने आज यह दुस्साहस कर दिखाया था कि आज मेहता जी का खौफ नहीं रहेगा।

लाम्बिया वासी डाकुओं से निपटने की योजना बना रहे थे, किन्तु वे नायकहीन सेना की भाँति थे। तभी अश्वारूढ़ मेहता जी को आते देखा और सब ओर उत्साह की लहर दौड़ गयी। उन्होंने सभी को आश्वस्त किया और डाकू-दल पर टूट पड़े।

रात-दिन घमासान चलता रहा। गाँववासी पूरे दम-खम से जान हथेली में लिए लड़ने लगे तलवारों की खन-खन और लाठी-भालों की धड़-धड़ाहट से लग रहा था युद्ध पूरे उफान में है। संख्या में डाकू भी कम नहीं थे। फिर रात-दिन लड़ते-लड़ते गाँव वालों के भी पाँव लड़खड़ाने लगे। मेहता जी को लगने लगा—''अब शायद ही मैं हवेली का द्वार देख सकूँगा।'' पराजय भी भूतनी जैसा अट्टहास कर रही थी। इतने में ही तेरस की दूधिया चाँदनी रात में रणभूमि में एक सेवक ने आकर आवाज लगाई—''मेहता जी बधाई हो ! कुंवरसाहब का जन्म हुआ है !!''

बधाई का समाचार सुनते ही उनके तन-मन में न जाने कहाँ से अद्‌भुत शक्ति आ गई। मेहता जी की तलवार काली की जीभ की तरह लपलपाने लगी। उनके हाथ मानों बिजली के करेंट से चालित हो गये। गाँववाले भी दूने जोश में आ गये। डाकुओं ने परिस्थिति की विकटता भाँपी। वे अपनी जान बचाने की चिन्ता में अपने भाले-तलवार छोड़कर भाग खड़े हुए।

सभी ग्रामवासी मेहता जी की जय-जयकार कर रहे थे। गूजरों के मुखिया ने कहा—''ऐसा लग रहा था कि आज कोई अदृश्य शक्ति आपके शरीर में आ गई थी। आज आप नहीं होते तो डाकू लोग जान-माल का बहुत नुकसान पहुँचाते।''

मेहता जी सोचने लगे—'कुंवर जन्म की बधाई का समाचार सुनते ही मेरे भीतर किसी अदृश्य शक्ति ने प्रवेश किया था। वह अदृश्य शक्ति कोई और नहीं उस पुण्य पुञ्ज बालक की ही शक्ति थी; अन्यथा आज मेरी 'जय' असम्भव ही थी। इस 'जय' का सेहरा किसके सिर बाँधू ? गाँव वालों की हिम्मत, महिमादेवी की मूक-शुभाशीष या नये मेहमान की पुण्य-लीला ?'

Scanned by CamScanner

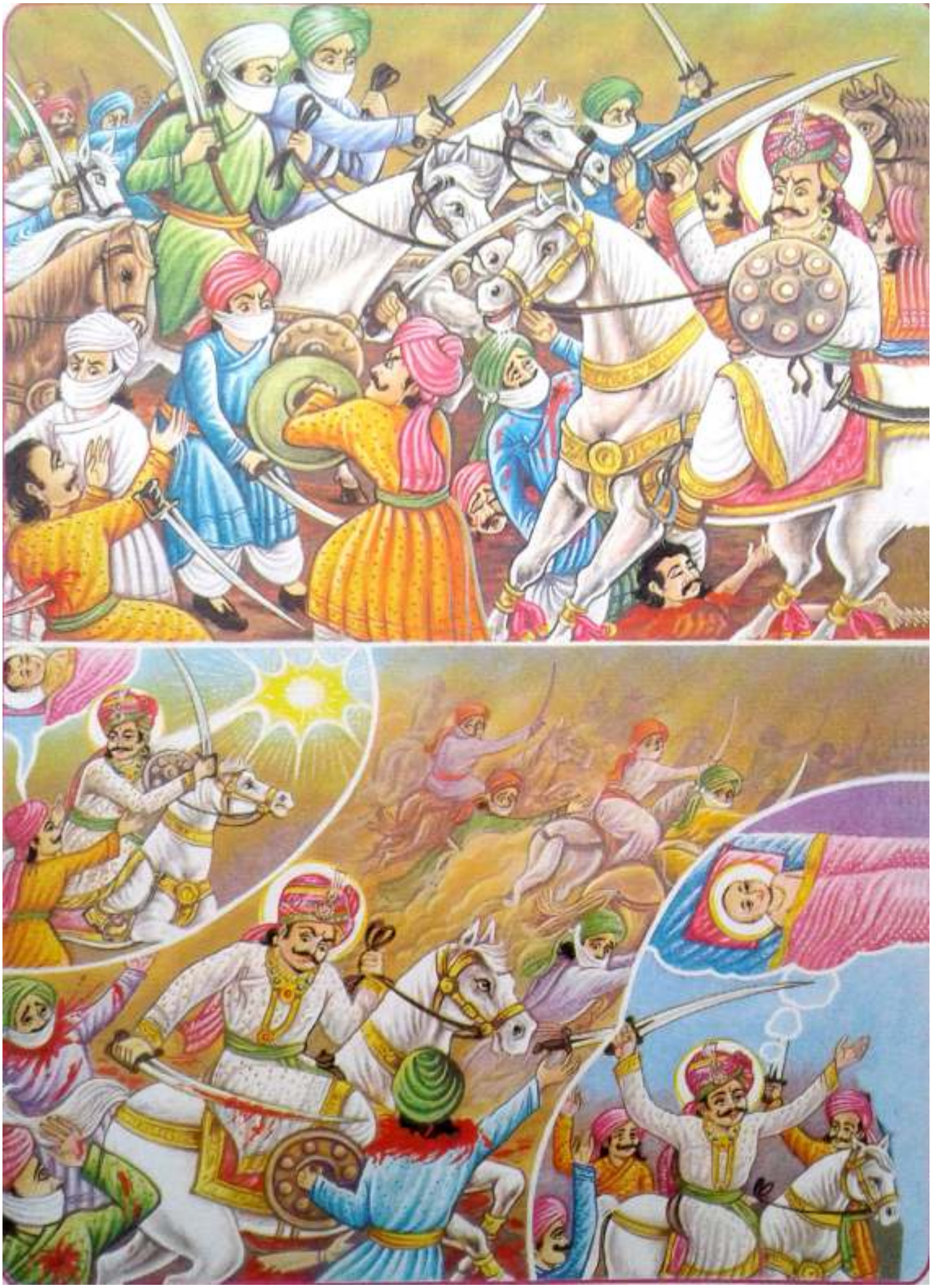

Scanned by CamScanner

युद्ध में मिली विजय, पुत्र का नामकरण : जय

अगले दिन प्रातः राजमहल के बुलावे पर मेहता जी राजसभा में पहुँचे तो सभी ने उन्हें बधाईयाँ दीं। उनके शौर्य-पराक्रम की प्रशंसा की।

ठाकुर मानसिंह जी ने पुत्र-जन्म के उपलक्ष्य में उन्हें अनेक उपहार दिये और डाकुओं पर विजय के उपलक्ष्य में उनका अभिनन्दन किया। मेहता जी को अपने हाथ से उन्होंने साफा बंधवाया और कमर में तलवार लटकायी।

जोधपुर के नरेश और दीवान के साथ मेहता जी के अच्छे सम्बंधों की चर्चा करते हुए ठाकुर साहब ने जोधपुर राज्य से लाम्बिया रियासत के बारह गाँवों (लाम्बिया रियासत के सात गाँवों के पट्टे थे, शेष पाँच गाँव के बाकी थे) की स्वीकृति ले लेने का आग्रह किया। राज्य और देश की राजनैतिक स्थितियाँ मेहता जी को अभी इसके अनुकूल नहीं लग रही थीं, किन्तु ठाकुर साहब अपने दुराग्रह पर अड़े हुए थे।

मेहता जी ने विस्तारपूर्वक चर्चा करते हुए अपने तर्कों के सहारे अन्ततः ठाकुर साहब को सहमत करने में सफलता प्राप्त कर ही ली। मेहता जी की यह दूसरी विजय थी।

पुत्र-जन्म के साथ युद्ध में मिली 'जय' और उसके पश्चात् राजसभा में मिली भव्य विजय और सफलताओं से प्रसन्नचित्त मेहता जी ने अपने द्वितीय पुत्र का नाम 'जयमल' रख दिया।

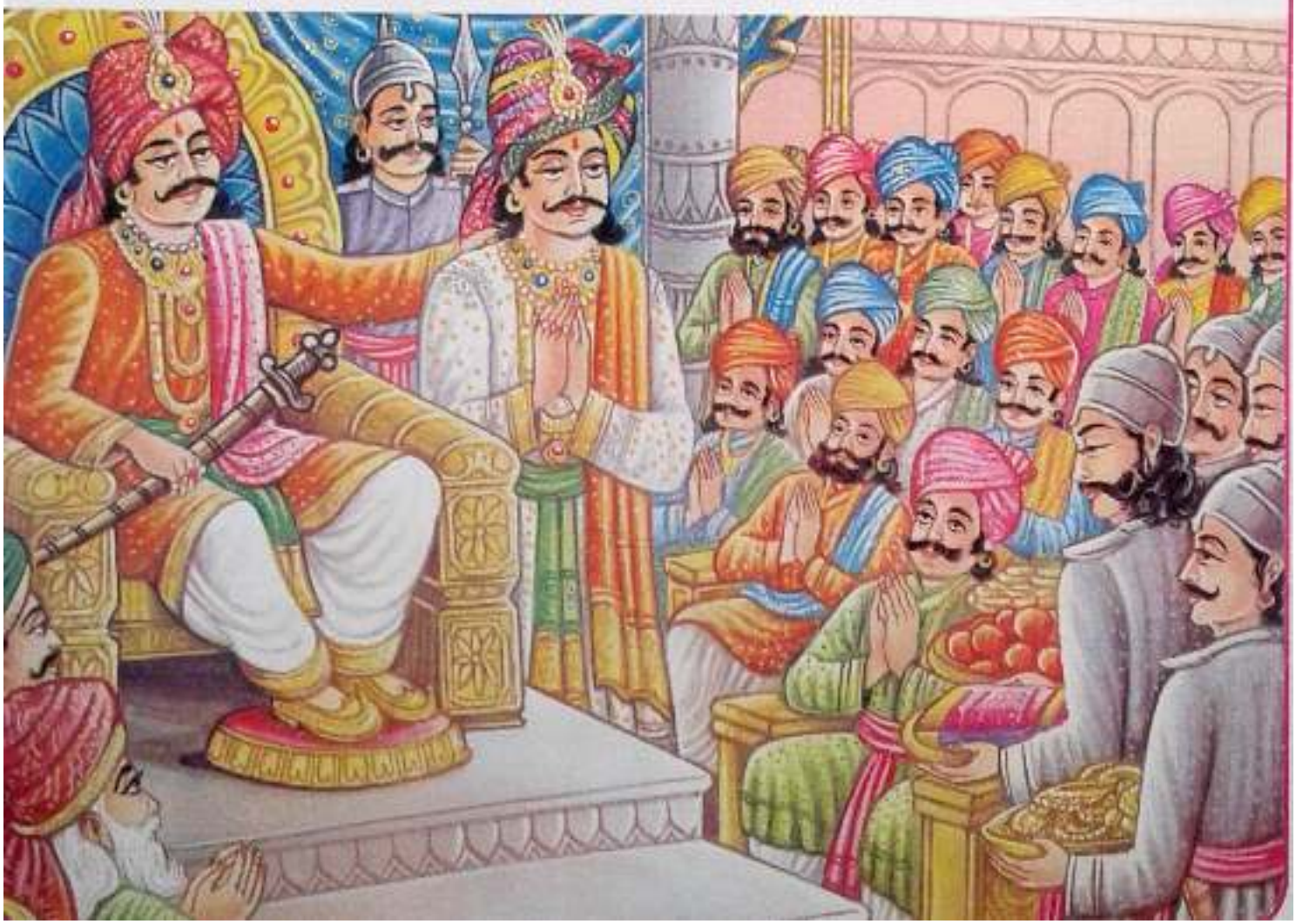

Scanned by CamScanner

यह होनहार बालक धर्म-धुरंधर होगा :

शिशु जयमल समस्त शुभ लक्षणों से युक्त था। गौर वर्ण और तेजोमय मुखमंडल, उन्नत भाल और दमकते विशाल नयन, दीर्घ नासिका और स्वस्थ-चंचल गात—सब मिलाकर ऐसे मोहक सौंदर्य की सृष्टि करते थे कि जो भी देखता उसके मन में उसे गोद में उठा लेने की ललक जाग उठती थी। यों बालक जयमल का लाड़-प्यार तथा वैभव-विलास युक्त वातावरण में विकास होता रहा।

जननी की पाठशाला की शिक्षा पूर्ण होते-होते जयमल को गुरांसा की पाठशाला में भेज दिया गया। उन दिनों ये पाठशालाएँ बहुद्देश्यीय होती थीं। वहाँ व्यवहारिक ज्ञान के साथ-साथ अध्यात्मिक शिक्षण भी दिया जाता था, औषधोपचार भी होता और वे तंत्र-मंत्र, टोने-टोटके के केन्द्र भी होते थे।

प्रथम दिवस ही जब गुरुजी ने अंक ज्ञान देना आरम्भ किया तो बालक जयमल ने डेढ़े, ढाइये, पौने, सवाए आदि के पहाड़े भी बोलकर सुना दिये।

गुरुजी—''वत्स ! आश्चर्य है, तुमने ये सब कहाँ से सीख लिया।''

जयमल—''रिडमल भैया घर पर बोल-बोलकर याद करते, तभी सुन-सुनकर मैंने सीख लिया।''

जयमल की अद्‌भुत स्मरण शक्ति और प्रतिभा से गुरुजी विस्मित और चमत्कृत हो उठे। बड़ी ही शीघ्रता से उसने विद्या प्राप्त कर ली और वह शाला का प्रवीणतम छात्र हो गया। गुरुजी की अनुपस्थिति में वही अन्य बालकों को पाठ पढ़ाता। सहपाठी सूरतराम से मल्लयुद्ध करते हुए उसने कुश्ती, तैराकी आदि भी सीख ली।

जयमल की तीक्ष्ण बुद्धि से प्रभावित होकर एक दिन गुरुजी ने उससे कहा—''वत्स ! तुम्हारी असाधारण क्षमता-योग्यता के कारण मेरी इच्छा होती है कि तुम्हें एक और विद्या सिखाऊँ जो साधारण बुद्धि वालों के लिए नहीं होती।''

जयमल—''कौन-सी विद्या गुरुजी ! मैं अवश्य सीखूँगा।''

गुरुजी—''ऊँ.....हूँ.....पहले तुम्हें वचन देना होगा कि तुम वह विद्या केवल सीखोगे, सीखकर घर-संसार से विमुख नहीं होओगे।''

जयमल मन में सोचने लगा—'जो विद्या सीखकर उसका उपयोग न किया जाये, वह विद्या किस काम की।' जयमल ने गुरूजी को वचन दिया— ''गुरुदेव, मैं उस विद्या का सदुपयोग करूँगा।''

गुरुजी—''वत्स ! हमें तुमसे यही आशा थी। आओ, हम तुम्हें अध्यात्म विद्या सिखाते हैं। आज से ही आरम्भ कर देते हैं।''

Scanned by CamScanner

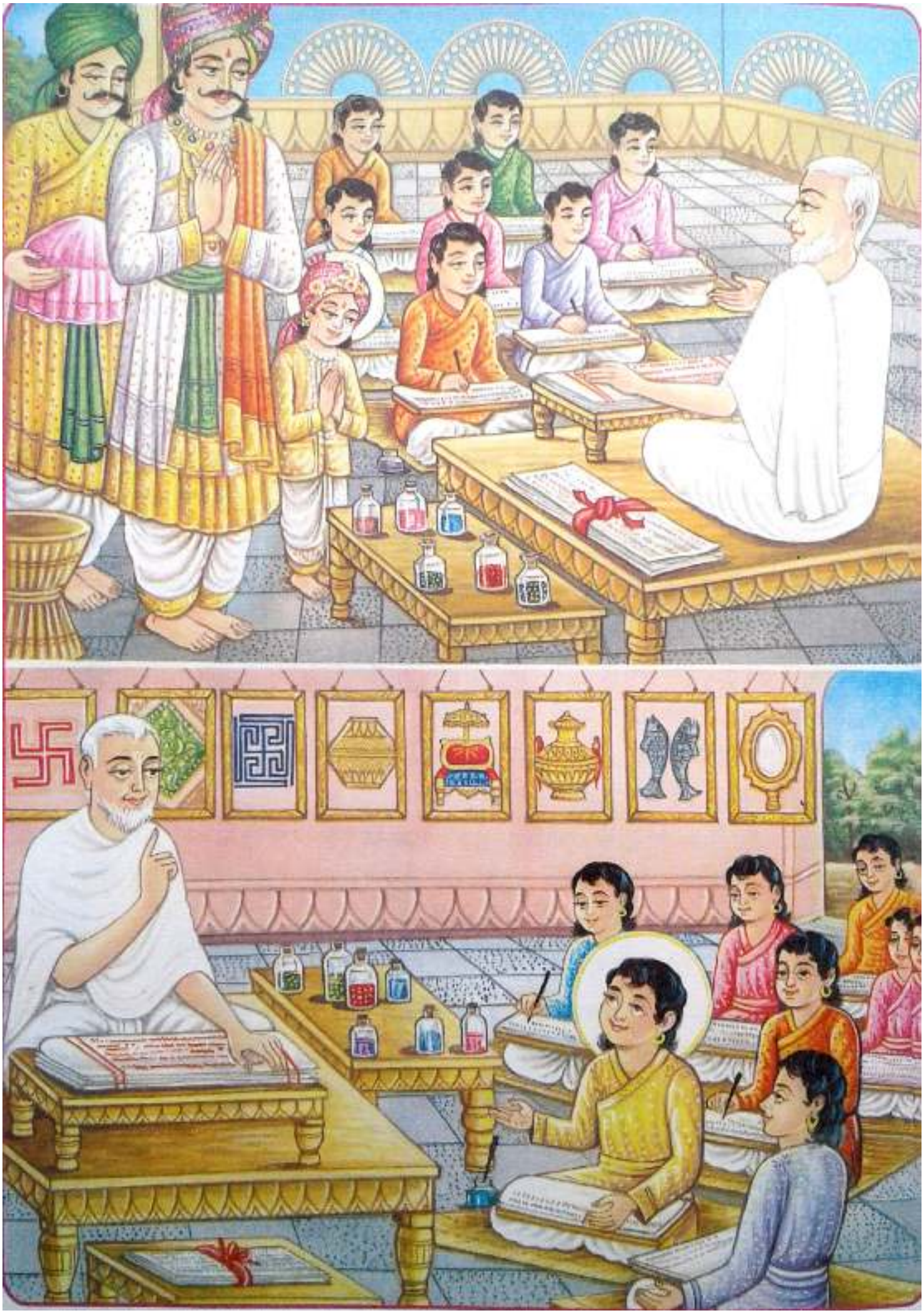

Scanned by CamScanner

जयमल—''हाँ ! सिखाइये न गुरुजी।''

अध्यात्मविद्या के अंक-ज्ञान से आरम्भ करते हुए गुरांसा ने सिखाया—''एक-एकम-एक—अर्थात् सभी आत्माएँ एक-सी होती हैं।''

अध्यात्म विद्या का अंक दो आया। गुरांसा ने कहा—''दो एकम दो—यानी सब जीवों की अवस्था दो है। एक—संसार की अवस्था, दूसरी—सिद्ध अवस्था। तीन का अंक आने पर गुरुजी ने ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूपी साधना की त्रिपुटी पर प्रकाश डाला।

इसी प्रकार चार के अंक पर गुरांसा ने समझाया—''जीवों की चार गतियाँ हैं—देव, मनुष्य, तिर्यंच और नारकीय। देवों के लिए सुख ही सुख और नारकीय के लिए दुःख ही दुःख हैं। अतः इनके लिए मुक्ति नहीं है। तिर्यंच तो अल्पज्ञानी अथवा अज्ञानी होते हैं। केवल मनुष्य जीवन में ही जीव मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। यही भव श्रेष्ठतम है—इसे व्यर्थ नहीं खोना चाहिये। मोक्ष की प्राप्ति के लिए इसका सदुपयोग करने में ही बुद्धिमत्ता है, क्योंकि जीवन कब समाप्त हो जायेगा, इसका कुछ भी निश्चय नहीं।''

किशोर मन में गुरांसा का संदेश घर कर गया।

अब जयमल यही सोचते रहते कि मानव जीवन के पल-प्रतिपल का सदुपयोग कैसे किया जाय ? वे गुरुजी से आगे से आगे ज्ञान प्राप्त करते रहे। आत्म चिन्तन की उनकी प्रवृत्ति विकसित होने लगी। वे अवकाश के क्षणों में अन्तर्मुखी होकर चिन्तन-मनन में लगे रहते।

''बड़ा होकर यह होनहार बालक धुरंधर होगा, इतना पक्का है।'' गुरुजी के शब्द सुनकर मेहता मोहनदास जी अचरज में पड़ गये। ऐसा कुछ तो उन्होंने बेटे के विषय में कभी सोचा ही नहीं था। सहसा पूछ बैठे—''कैसा धुरंधर, गुरुजी ?''

''राज धुरंधर भी हो सकता है, धर्म धुरंधर भी हो सकता है। आरम्भ में यदि राज धुरंधर हुआ भी, तब भी उसे वह दिशा छोड़कर अन्ततः धर्म-धुरंधर ही होना है—यह निश्चय मान लीजिए, मेहता जी !'' गुरांसा ने समझाया।

मेहता जी को असमंजस में पड़े देखकर गुरांसा ने और स्पष्ट किया—''तुम्हारा यह बेटा संसार के बंधन में नहीं रहेगा। मैंने अच्छी तरह से परख लिया है। इसका स्वभाव और लक्षण इसे कोई महापुरुष बनायेंगे।''

मेहता जी यह सुनकर हक्के-बक्के ही रह गये। उनके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। मेहता जी बोले—''गुरांसा ! मैं तो इसे राज-काज में इसे अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता हूँ। आप इसे ऐसी कुछ शिक्षा दीजिए।''

गुरांसा—''आपकी इच्छा का ध्यान रखूँगा। आगे जैसी होनहार.....।''

Scanned by CamScanner

संसार में मन रमाने का प्रयास : व्यवसाय और विवाह

गुरुजी का कथन बार-बार मेहता जी कानों में गूँजता रहता—"तुम्हारा यह पुत्र संसार के बंधन में नहीं बँधेगा.....।" और मेहता जी ने भी जयमल को संसार-विमुख न होने देने की ठान ली। उनका मन जगत् में रमाने हेतु पिता ने अनेक सामाजिक दायित्व उनको सौंपे।

सभी कामों में जयमल को अग्रणी रखा जाता। रिडमल की सगाई-विवाह के काम-काज की सारी जिम्मेदारी भी जयमल को सौंप दी। शालीनता और कौशल से कार्य कर वे सभी के प्रीतिपात्र बन गये। कुलीन कन्या विनयदेवी घर में बहू बनकर आयी जिसने अपने सद्‌गुणों से सबका मन जीत लिया। देवर-भाभी के मध्य भाई-बहन-सा निर्मल स्नेह विकसित होने लगा।

मेहता जी ने दोनों भाइयों को व्यापार में लगा दिया। व्यवसाय भी अच्छा चल पड़ा। जयमल मेड़ता से दुकान की सामग्री खरीद कर लाने का काम सम्भालते।

बुद्धि-कुशल जयमल ने कुछ ही समय में व्यावसायिक कौशल अर्जित कर लिया और वे इस क्षेत्र के सारे गुर जान गए। बाजार का रुख आँकने में वे प्रवीण हो गए और दूर-दूर से व्यापारी आकर उनसे परामर्श लेने लगे। उनकी धारणा खरी उतरती। व्यापार-जगत् में उनको अच्छी कीर्ति प्राप्त हो गयी।

मेड़ता के समीप एंक अन्य रियासत 'शेरसिंह की रियां' के मेहता शिवकरण जी अपनी पुत्री लक्ष्मीदेवी (लाछां) के लिए योग्य वर की खोज में थे। जयमल को उपयुक्त मानकर उन्होंने मेहता मोहनजी के पास प्रस्ताव भेजा। इस परिवार ने प्रस्ताव स्वीकार भी कर लिया और विवाह का शुभ मुहूर्त निश्चित कर लिया गया।

रियां में वर-यात्रा की शोभा निराली ही थी। २२ वर्षीय युवा, सुन्दर वर अपने अनुपम वेश में ऐसा लगता था मानो साक्षात् इन्द्र ही शची के द्वार पर आया हो। गवाक्ष से लाछां देवी ने वर-दर्शन किये तो धन्य हो उठी। उसका अन्तरमन मधुर हो उठा और कहने लगा—"लाछां ! ये ही तो तेरे जनम-जनम के मितवा हैं। तेरा तो जीवन ही सार्थक हो गया री !" बड़ी ही धूमधाम के साथ मंगल-परिणय सम्पन्न हुआ।

बारात नववधू के साथ लाम्बिया लौटी तो नगर भर में उत्सव का सा वातावरण हो गया। हवेली पर नई बहू का भाव भरा स्वागत किया गया।

आरम्भ से ही लाछांदेवी ने अपनी नम्रता, शिष्टाचार और सुसंस्कारों से समस्त परिजनों का हृदय जीत लिया। वह सभी की स्नेह-पात्र हो गयी। सभी अन्तरमन से स्वीकार करते कि बहू नाम से ही नहीं, गुणों में भी साक्षात् लक्ष्मी है।

Scanned by CamScanner

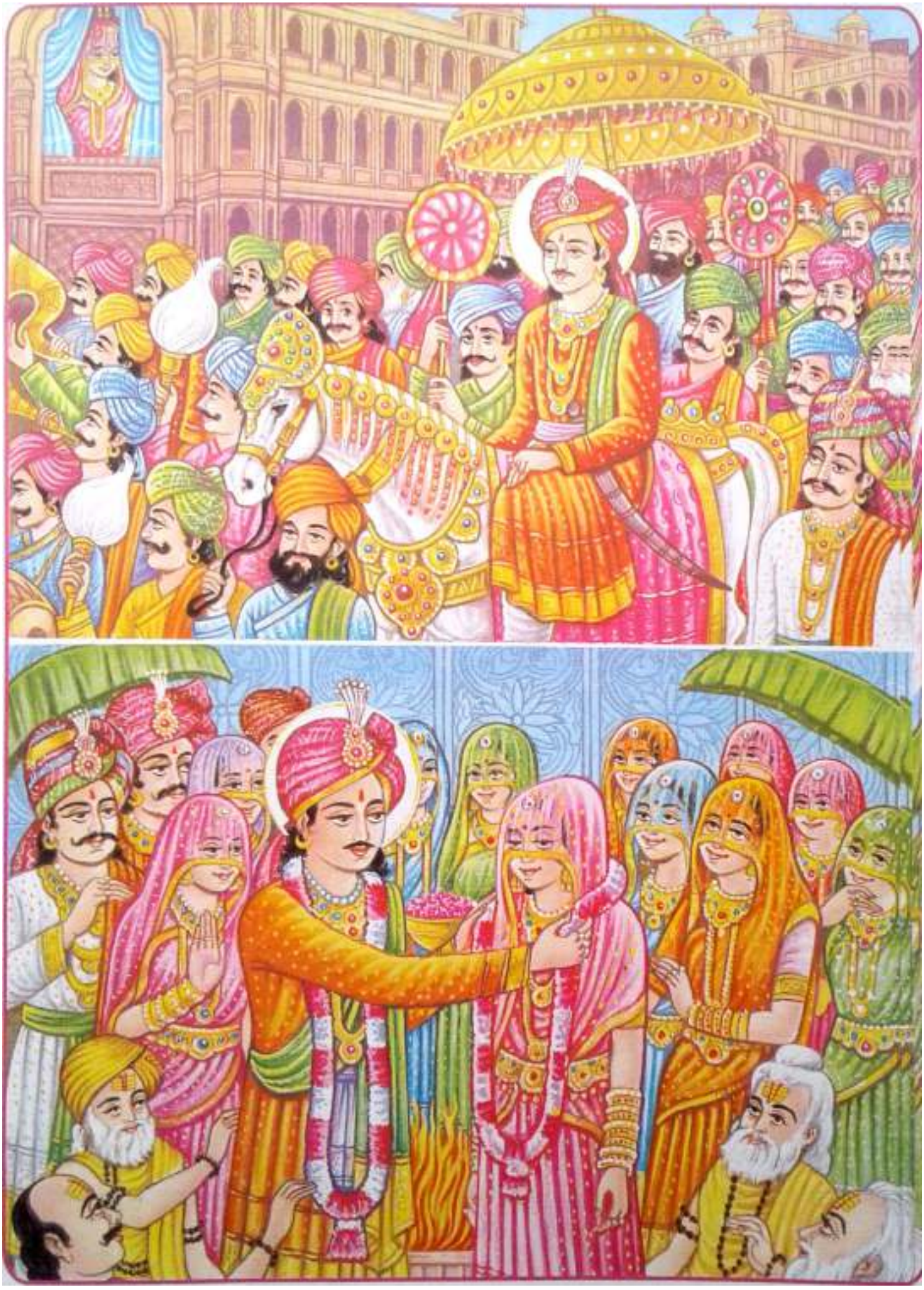

Scanned by CamScanner

उन दिनों ऐसा रिवाज था कि नवविवाहिता को एक रात ससुराल में रखकर फिर वापस पीहर वाले आकर ले जाते थे। सुविधा के अनुसार शुभ मुहुर्त में गौना (मुकलावा) होने पर पति जाकर पत्नी को लाता था।

लाछां दे को भी पीहर से लेने के लिए आये। भारी मन से सभी ने विदा किया। श्रावण-भादवा में नवविवाहिता वापस ससुराल नहीं जाती। आश्विन लगते ही लाछां दे पतिदेव के आने का इंतजार करने लगी। आश्विन बीता और कार्तिक भी बीता जा रहा था। जयमल जी अपने व्यापार में इतने उलझे रहे कि गौना कराने भी नहीं जा सके।

एक दिन लाछां दे के पिता शिवकरण जी की चिट्ठी लेकर एक सज्जन आये। मोहनदास जी ने चिट्ठी पढ़ी। फिर महिमा दे के पास आकर बोले–"रियां से पत्र आया है। जयमल को मुकलावे के लिए बुलाया है। बहुत दिन हो गये हैं अब तो भेजना चाहिए। क्या तुम्हें अपनी बहू की याद नहीं आ रही है ?"

महिमा दे ने कहा–"मैं तो कब से कह रही हूँ कि जयमल बहू को ले आ ! मुझे लाछां दे की बहुत याद आती है। परन्तु वह कहता है, अभी दीवाली का समय है। दुकानदारी में बड़े भाई साहब को सहयोग देता हूँ। फुर्सत मिलने पर जाऊँगा।"

आचार्यश्री के प्रथम भव्य दर्शन :

जयमल जी को रियां जाना था, कुछ दिनों वहाँ रुककर ही लाछां दे के साथ लौटना था। दुकान के लिए सामान क्रय करना भी आवश्यक हो रहा था। जयमल जी को इस हेतु मेड़ता भेजना निश्चित हुआ तो महिमा दे ने आपत्ति की–"बुलावा आने के बाद जयमल का कहीं अन्यत्र जाना उपयुक्त नहीं।" परन्तु किसी ने भी महिमा दे के कथन पर ध्यान नहीं दिया।

सूरतराम, भँवरलाल आदि कुछ मित्रों के संग जयमल जी जब सौदा खरीदने को मेड़ता पहुँचे तो भोर होने में कुछ समय शेष था। नदी तट पर रुककर विश्राम करने लगे तो जयमल जी की आँख लग गई और वे एक स्वप्न देखने लगे। चन्द्रमा-सी शीतल, उज्वल कान्ति के साथ एक दिव्य महापुरुष के दर्शन उन्हें स्वप्न में हुए। जयमल जी ने पाया कि कोई श्वेत आभा सम्पन्न दिव्यात्मा एकटक उनकी ओर ही निहार रहे थे.....और वे स्वयं भी उनकी ओर खिंचे चले जा रहे थे। नींद खुलने पर भी वे बड़ी देर तक खुली आँखों से वही दृश्य देखते रहे।

Scanned by CamScanner

मित्रों से चर्चा की तो उन्हें बताया गया कि यह स्वप्न बड़ा शुभ है जो संकेत कर रहा है कि चाँदी, ऊन, कपास आदि श्वेत वस्तुओं के व्यापार से तुम्हें आज लाभ ही लाभ मिलेगा। किन्तु जयमल को कुछ और ही लग रहा था, वे चुप रहे।

मेड़ता नगर में पहुँचे तो बाजार बन्द था। जयमल जी बोले–"अरे, आज बाजार बन्द क्यों है ?" तभी उन्हें एक व्यक्ति जाता हुआ दिखा। उन्होंने उस व्यक्ति से पूछा तो उसने बताया–"आचार्यश्री भूधर जी महाराज के चातुर्मास का आज अन्तिम दिन है। सभी लोग प्रवचन सुनने गये हैं। प्रवचन के पश्चात् बाजार खुलेगा।" जयमल जी के मन में अन्तःप्रेरणा जगी। वे लोग भी प्रवचन सुनने पहुँच गये। पाट पर विराजित आचार्यश्री के प्रथम दर्शन से ही जयमल जी तो विस्मित हो उठे–"अरे ! इन्हीं दिव्य विभूति के पावन दर्शन तो आज स्वप्न में हुए थे। अवश्य ही कोई शुभ घटित होने वाला है।" जयमल जी के मन में एक भावना उठी कि ये ही मेरे उद्धारक हैं।

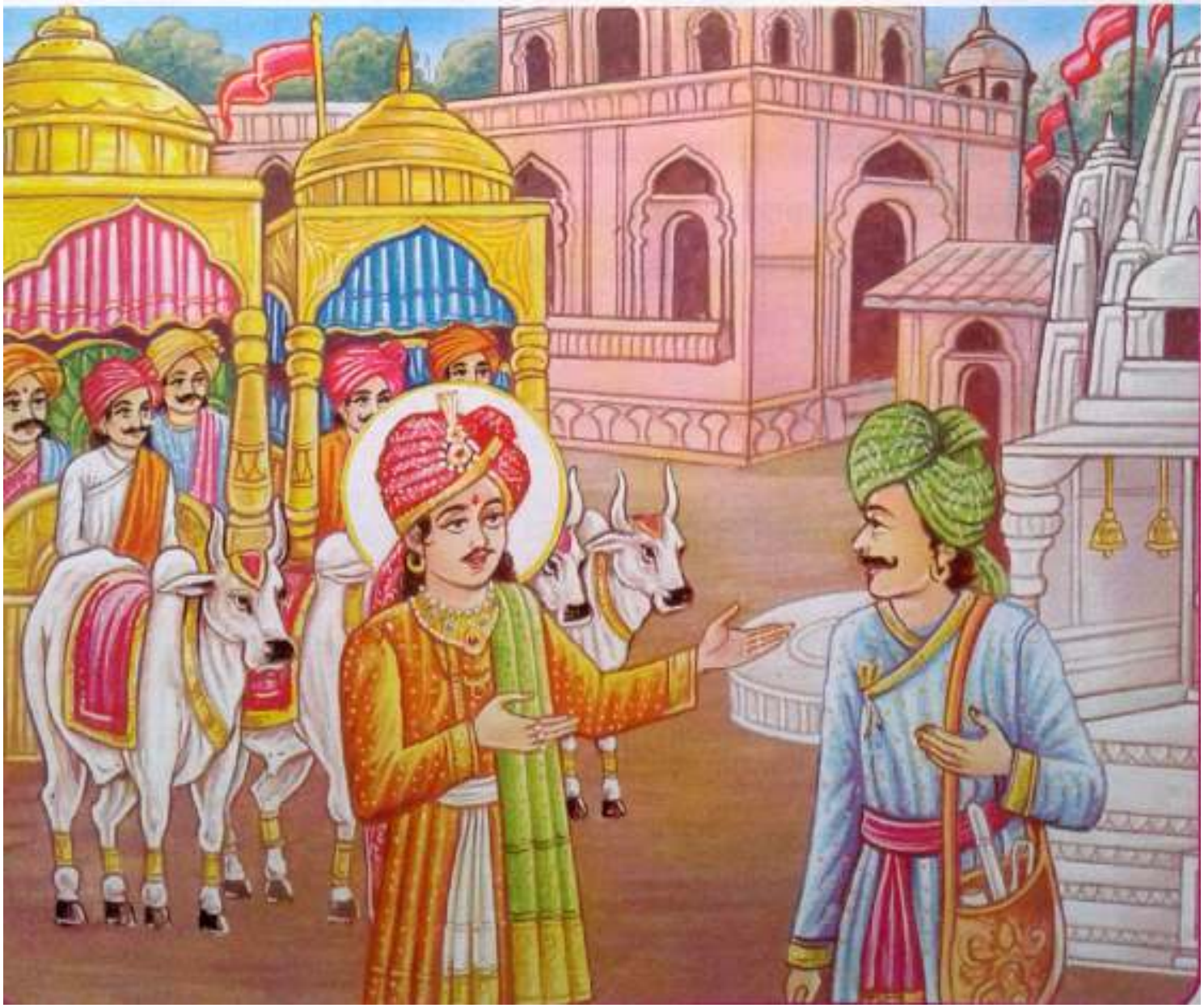

Scanned by CamScanner

जयमल जी ने हार्दिक श्रद्धापूर्वक आचार्यश्री को करबद्ध नमन किया। उस दिव्य आत्मा के प्रति वे समर्पित हो गये। एकटक वे अपने उद्धारक की ओर ही निहारते रह गए। आचार्यश्री की मधुरवाणी गूँज उठी—''दया पालो.....जीवन को धर्म की ज्योति से आलोकित करो.....।''

ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण :

कार्तिक चातुर्मासी का विशेष प्रवचन चल रहा था। आचार्यश्री उत्तराध्ययन सूत्र की गाथा के संदर्भ में चार दुर्लभ अंगों का विवेचन कर रहे थे—

''प्रथम दुर्लभ तो यह मानव भव ही है। असंख्य पुण्यों-सुकृत्यों के फलस्वरूप में जीव को इसकी प्राप्ति होती है। साधना द्वारा मुक्ति प्राप्त कर लेना ही इस जीवन का सदुपयोग है, जो किसी अन्य योनि में संभव नहीं। अन्य किसी भव में जीव धर्माराधना कर मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता।''

आचार्यश्री की वाणी का एक-एक शब्द जयमल जी के मानस में घर करता जा रहा था।

आचार्यश्री ने कहा कि ''दूसरा दुर्लभ है वीतराग की वाणी का श्रवण कर पाना। ये दोनों भी सुलभ हो जाएँ तो श्रद्धा के बिना सच्चा ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता। त्याग द्वारा सच्ची श्रद्धा को विकसित किया जा सकता है।''

Scanned by CamScanner

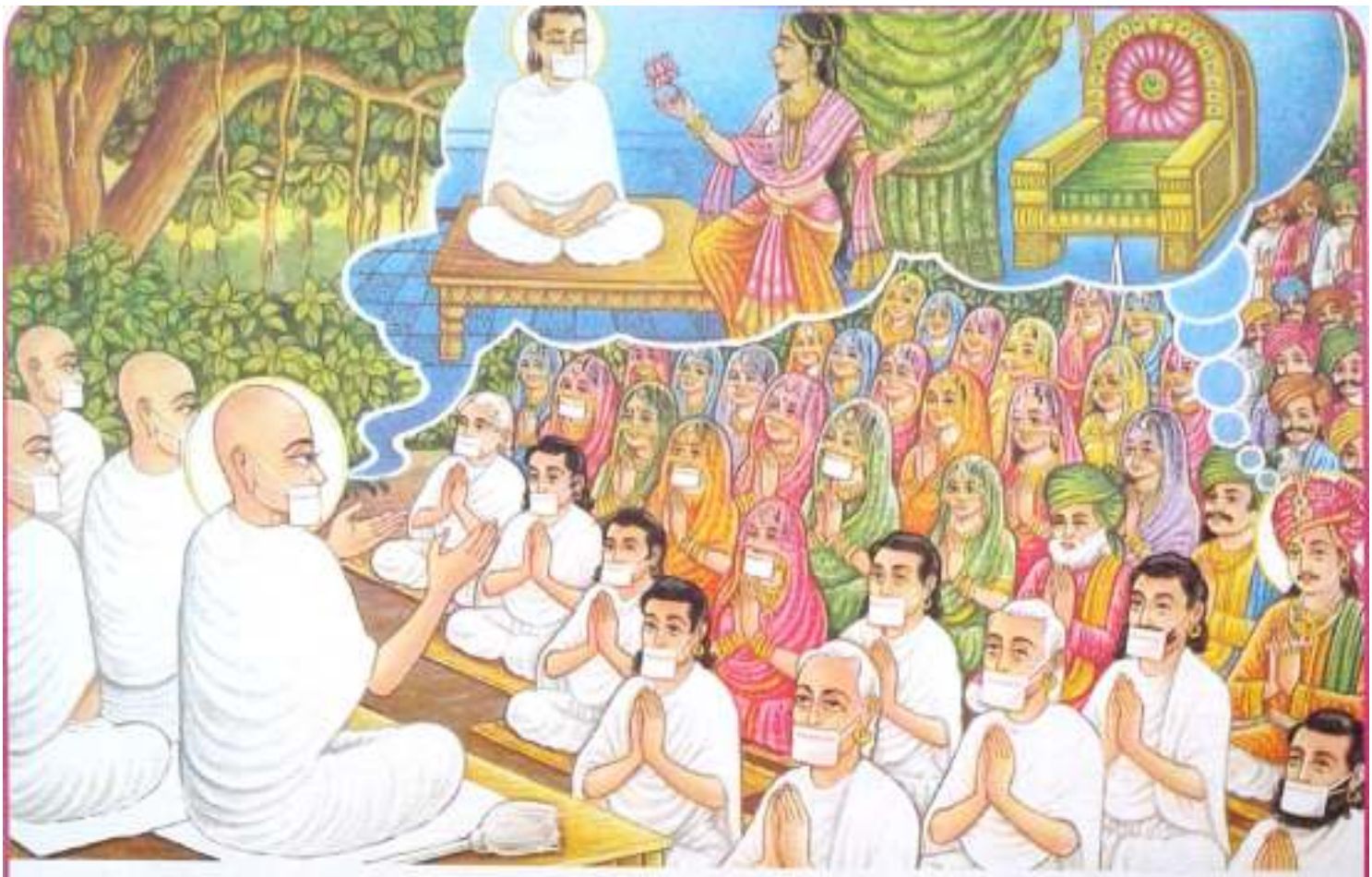

पराक्रम को चौथा दुर्लभ अंग बताते हुए आचार्यश्री ने कहा–''निर्भीक होकर साहसपूर्वक संयममार्ग पर अग्रसर होना अत्यावश्यक है।''

आत्म कल्याणार्थियों को आचार्यश्री ने जीवन की क्षणभंगुरता समझाते हुए प्रेरित किया–''सोचा हुआ करणीय आज ही कर लो–कल की प्रतीक्षा मत करो।''

प्रसंगवश आचार्यश्री ने सुदर्शन सेठ के प्रसंग में उसकी शील, दृढ़ता तथा ब्रह्मचर्य के अचिन्त्यनीय प्रभाव का वर्णन करते हुए बताया–''ब्रह्मचर्य सब व्रतों का राजा है। एक ब्रह्मचर्य की आराधना से सब व्रतों की आराधना हो जाती है।''

इस प्रवचन का जयमल जी के मन पर जादुई प्रभाव पड़ा। उनके भीतर के सुप्त संस्कार जाग उठे। वे उठकर खड़े हो गये और बोले–''पूज्यवर ! आपश्री की वाणी से मेरे मन में सच्ची और पक्की श्रद्धा जाग उठी है। पहली बार ही मुझको आत्मज्ञान की महत्ता समझ में आयी है। मुझ पर अनुग्रह कर अपनी चरण-शरण में ले लीजिये और ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञा दिलाकर उपकृत कीजिये।''

अचानक जयमल जी का निर्णय सुनकर सभी चौंक उठे। मित्रों में खलबली मच गयी। कल जिसे मुकलावे के लिए जाना है, वह आज क्या कर रहा है ? श्रोताओं में से किसी ने आचार्यश्री को अवगत कराया कि इस युवक का विवाह छह माह पूर्व ही हुआ है।

Scanned by CamScanner

आचार्यश्री ने गम्भीरता के साथ कहा—''वत्स ! ब्रह्मचर्य व्रत का निर्वाह सरल नहीं है।''

नम्रतापूर्वक जयमल जी ने निवेदन किया—''मेरा यह दृढ़ निश्चय है पूज्यवर ! जब मन में विरक्ति हो गयी तो फिर व्रत का निर्वाह दुष्कर कैसे हो सकता है ?''

किसी श्रोता ने जब कहा कि इस प्रतिज्ञाग्रहण के पूर्व माता-पिता, पत्नी आदि की अनुमति भी तो अपेक्षित है तो जयमल जी ने निराकरण करते हुए कहा—''अपनी आत्मा के लिए मैं स्वाधीन हूँ। महाराज साहब का प्रवचन सुनते ही मैंने तो मन में दृढ़ संकल्प कर लिया था। अब मैं आप सभी के समक्ष इस धर्म-सभा में गुरुदेव एवं आत्मा-परमात्मा की साक्षी से यह संकल्प करता हूँ कि सम्पूर्ण कुशील सेवन का जीवन पर्यन्त मेरे त्याग रहेगा। मैं संसार की सब स्त्रियों को माता-बहनों की भाँति मानूँगा। इसका कोई अपवाद भी नहीं होगा। मैंने ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार कर लिया है, इस पर मैं आजीवन अडिग बना रहूँगा।''

युवक जयमल जी की भीष्म प्रतिज्ञा से आचार्यश्री बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने जयमल जी को साधुवाद देते हुए अपना पावन आशीर्वाद प्रदान किया। जयमल जी ने उपकृत होकर हाथ जोड़कर वन्दना की। सारी सभा चमत्कृत हो उठी।

याचना—दीक्षा के लिए :

मेड़ता आए। मित्रगण चिन्तित और विचलित हो उठे कि जयमल तो दुकान के सौदे के लिए आया था और यह क्या सौदा कर बैठा। मित्रगण की उपस्थिति में यह सबकुछ हुआ, अतः उन पर भी बात आयेगी—ये सोचकर वे परेशान थे।

सूरतराम—''जयमल ! यह तुमने क्या किया ? अभी-अभी तो विवाह हुआ है तुम्हारा।''

जयमल जी—''मैंने सबकुछ अच्छी तरह सोच-समझकर ही किया है। मैं तो जल्दी ही दीक्षा भी ग्रहण करूँगा।''

आसकरण—''छोड़ो-छोड़ो ! यह समय दीक्षा-वीक्षा का नहीं। बाजार खुल गया है। चलो, हमें सौदा पूरा कर लाम्बिया लौटना होगा।''

जयमल जी—''भाई ! मैंने तो जीवन का सौदा कर लिया है। मेरे सौदे का लक्ष्य मुक्ति का लाभ है। दीक्षा का मेरा विचार अटल है। आचार्यश्री की कृपा से मैं संयम मार्ग पर अपने चरण अग्रसर कर लूँगा।

भवंरलाल—''जरा सोचो जयमल ! कम से कम अपनी पत्नी के बारे में तो ध्यान दो।''

जयमल जी—''सभी जीवों को अपना ध्यान स्वयं ही रखना होता है। कोई भी दूसरा किसी का हित नहीं साध सकता है।''

जयमल जी की अटपटी लगने वाली बातों से मित्र किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गये। घबराया-सा सूरतराम तीव्र गति वाली ऊंटनी पर आरूढ़ होकर लाम्बिया पहुँचा। उससे वृत्तांत सुनकर

Scanned by CamScanner

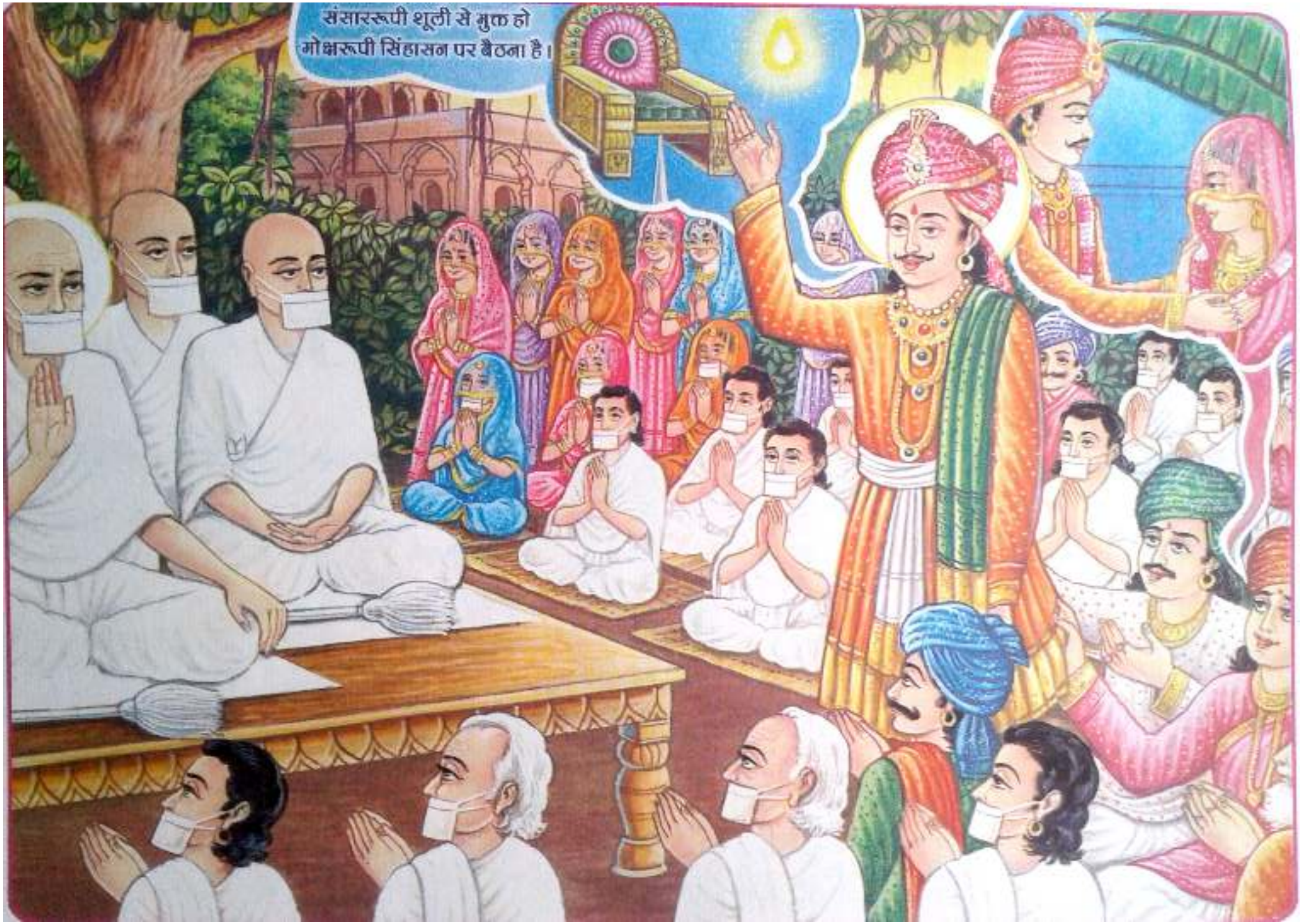

Scanned by CamScanner

मेहता परिवार तो सन्न रह गया। अचानक यह कैसा मोड़ आ गया। सारा परिवार मेड़ता के लिए प्रस्थान कर गया। ममतामयी माँ सोचती जा रही थीं कि मेरे भोले भाले लाल को साधुओं ने बहका दिया है। मैं उसे समझा-बुझाकर घर लौटा लाऊँगी।

स्थानक में जयमल जी ने श्रावकों-मुनियों से वार्तालाप कर साधुचर्या एवं धर्माचरण विषयक अनेक तथ्यों की जानकारी प्राप्त कर ली। इससे उनका धर्मानुराग दृढ़तर हो गया।

आचार्यश्री के चरणों में जयमल जी ने करबद्ध विनती की–''गुरुवर ! आपश्री की अनुकम्पा से मेरी सोई हुई आत्मा जाग उठी है। मानव जीवन का सही-सही उपयोग अब मैं भली भाँति जान गया हूँ। मोक्ष मेरा लक्ष्य हो गया है और मैं उसके मार्ग को जानकर उस पर गतिशील होना चाहता हूँ। कृपाकर मुझे अपनी शरण में लेकर इस योग्य बनाइये, मुझे दीक्षा प्रदान कीजिये।''

आचार्यश्री–''धन्य हो वत्स ! हम तुम्हारी धर्म-दृढ़ता जानकर बड़े प्रसन्न हुए। पर यों हथेली पर सरसों नहीं उगती। तुम तो दीक्षार्थ दृढ़ संकल्प हो, किन्तु हमारे सामने नियमों के कुछ बन्धन हैं।''

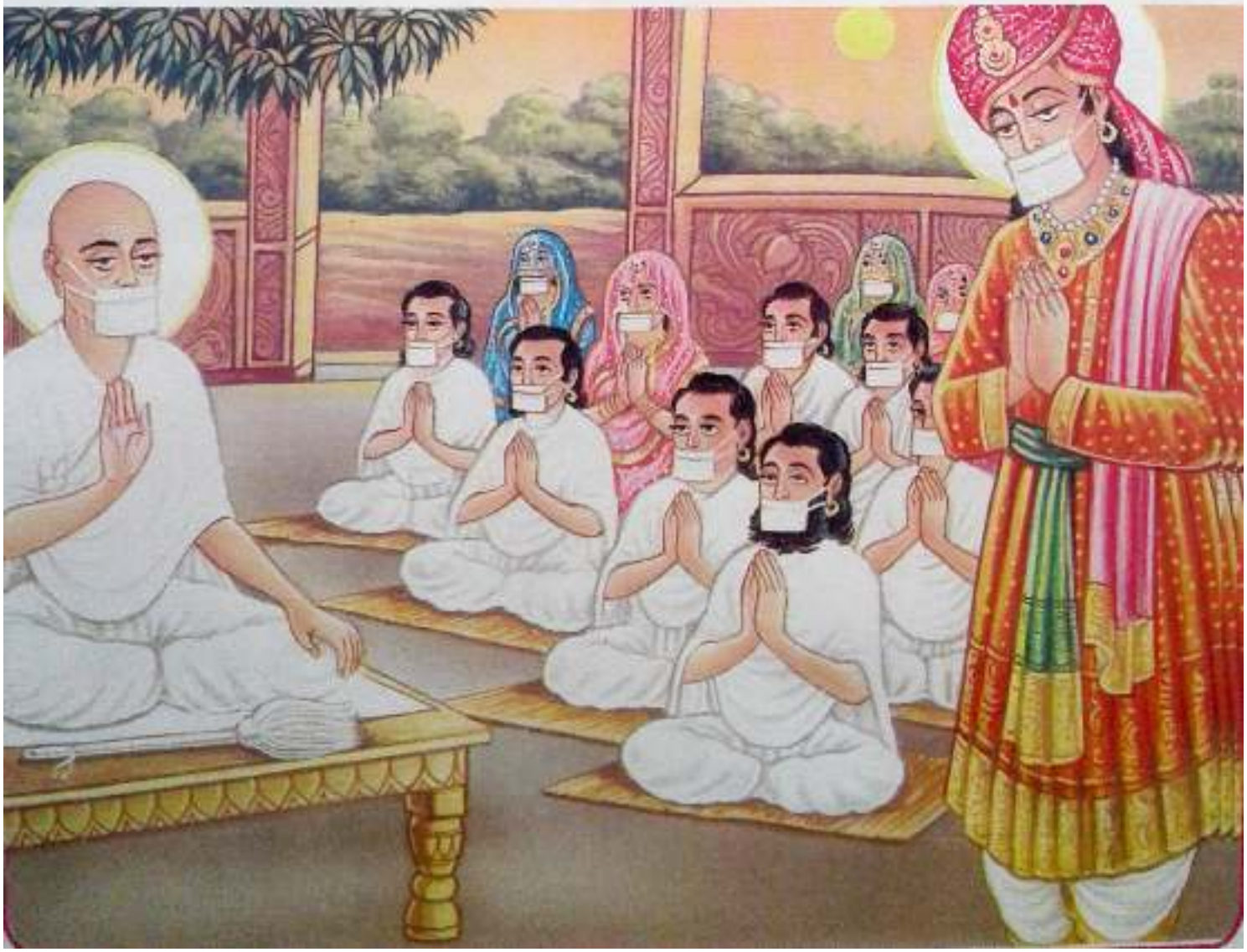

Scanned by CamScanner

जयमल जी—''बंधन.....? कैसे बंधन गुरुवर्य !''

आचार्यश्री—''दीक्षा लेने के लिए तुम्हें अपने माता-पिता से, श्रीसंघ से या राजा से आज्ञा लेनी होगी। दीक्षा के पूर्व इसकी अनिवार्यता रहती है।''

जयमल जी—''मेरे तो आप ही अभिभावक हैं.....आप ही बड़े हैं। आपकी ही अनुमति की आकांक्षा है गुरुदेव !''

आचार्यश्री ने जयमल जी की दृढ़ भावना के लिए सराहना की और कहा—''तुम्हें इस मार्ग से कोई भी रोक नहीं सकेगा।''

द्वन्द्व—अनुरक्ति और विरक्ति के बीच :

इधर मोहाकुल माता महिमा दे ने स्थानक में प्रवेश किया तो उन्हें सबसे पहले पाट पर विराजित आचार्यश्री दिखाई दे गये और उनका रोष भड़क उठा। पुत्र मोह में उचित-अनुचित का भान भुलाकर उन्होंने कहा—''साधुजी ! आपने मेरे प्यारे बेटे को क्यों बहका दिया है ? उसका बनता-बसता घर उजाड़ने पर क्यों तुले हुए हो ? आज वह साधु बनने चला है। जयमल मुझे प्राणों से भी प्यारा है, मेरे नयनों का तारा है। तुम मुझसे उसे छीन रहे हो, तुम्हारा सत्यानाश हो.....भूधरिया थांरो सित्यानाश जाइजे.....।''

''बाई ! शान्त हो जाओ..... ! तुमने सात के ही नाश की बात क्यों कही ? कर्म तो आठ होते हैं, आठों के नाश का आशीर्वाद दो ना..... ! अपने भाई को आशीर्वाद देते हुए ऐसा कहो.....'भूधरिया थांरो इठियानाश जाइजे.....।' क्रोध को त्यागो। इससे तुम्हारी ही हानि होगी, किसी अन्य की नहीं।'' आचार्यश्री ने कोमल वाणी में प्रबोधन दिया और उनके अधरों पर मंदहास फैल गया।

महिमा दे अब भी रोष के आवेग में काँप रही थीं। हाँफती हुई बोलीं—''मजाक न करो साधुजी ! बात को हवा में उड़ाने से काम न चलेगा। बताओ, कहाँ छिपा रखा है तुमने मेरे बेटे जयमल जी को ?''

''हमें किसी को छिपाने की क्या आवश्यकता, बाई !'' बिना किसी प्रतिक्रिया के आचार्यश्री ने शान्त होकर कहा। इसी बीच जयमल जी को उधर आते देख उन्होंने कहा—''लो, वह आ रहा है तुम्हारा लाड़ला। दीक्षा के लिए इसका दृढ़ संकल्प है, किन्तु हमने इसे बता दिया है कि माता-पिता की आज्ञा के बिना यह संभव नहीं है।''

मेहता जी और अन्य परिजन, सभी के जयमल जी ने आदरपूर्वक चरण स्पर्श किये।

Scanned by CamScanner

महिमा दे–''बेटे, अभी तुमने संसार का सुख देखा ही कहाँ है। यह सब तो बाद में भी हो जायेगा।' ''चल बेटे, चल.....घर चलते हैं। यहाँ तेरा क्या काम ?''

जयमल जी–''यह जीवन मोक्ष प्राप्ति की साधना के लिए बना है, माँ ! इसमें ही इसे लगाना होगा और वह भी आज से ही। बाद का किसने देखा है। क्षणभंगुर जीवन तो बुलबुले की तरह है, कभी भी समाप्त हो सकता है। समय रहते ही जीवन का लाभ उठा लेना चाहिये। मुझे दीक्षा की आज्ञा दें और आप आदर्श माता-पिता का धर्म निभाएँ।''

महिमा दे–''प्यारे बेटे ! हम तुझे रोकते नहीं, पर पहले गृहस्थ धर्म का पालन तो कर ले। हम सबको दुःखी करके जाने की क्यों ठान ली है तूने। देख सभी रो रहे हैं।''

जयमल जी–''मेरा कर्म बुरा हो, मैं कुमार्गी हो रहा हूँ, तब दुःखी होना, रोना ठीक है ! सन्मार्ग का पथिक होने जा रहा हूँ मैं। मुझे प्रसन्नता के साथ आज्ञा दें। फिर मैं आपको छोड़कर नहीं जा रहा। छोटे परिवार से निकलकर मैं तो बड़े परिवार का, जगत् भर का कल्याणकारी बनने जा रहा हूँ। उस बड़े परिवार के सदस्य आप भी तो हैं।''

विनयदेवी–''देवरजी, चले जाना संयम मार्ग पर। हम रोकेंगे नहीं तुम्हें, पर कुछ दिन तो हमारे संग रह लो।''

रिडमल–''तुम्हारी भाभी ठीक कहती है, भैय्या। मुझे तो दुःख इस बात का है कि मैं ही इस सबका कारण हूँ। मैंने तुम्हें सौदा क्रय करने को मेड़ता भेजा ही क्यों ?''

जयमल जी–''भैय्या जी, मुझे मेड़ता भेजकर आपने मेरा बड़ा उपकार किया है। मुझे सन्मार्ग तभी तो मिल पाया है। अब एक उपकार और कर दें–मुझे दीक्षा के लिए आज्ञा देने की कृपा करें।''

विनयदेवी–''देवर जी आप तो बहुत ज्ञानी हो गए हो, पर तनिक यह तो सोचो कि लाछां बेचारी किसके सहारे.....उसकी तो दया देखो।''

जयमल जी–''भाभी ! उसी की तो दया देख रहा हूँ। मैं उसे बंधन-मुक्त कर रहा हूँ। अन्यथा विषय-ग्रस्त रहकर वह न जाने कितने कर्म बाँध लेती और उस पाप का भागी मुझे भी किसी सीमा तक बनना पड़ता।''

उपस्थित जनसमुदाय में मौन छा गया। दीक्षार्थी जयमल जी ने पूर्व में जो वचन दे रखे थे, उनसे रंचमात्र भी मुकरे नहीं हैं–यह पाकर किसी के पास कोई अकाट्य तर्क शेष नहीं रह गया था।

पिय का इन्तजार करती लाछां देवी ने जब यह समाचार सुना तो अपने परिवार जनों के साथ वह भी मेड़ता पहुँच गयी। लाछांदेवी के पिता मेहता शिवकरण जी पर तो मानो वज्रपात

Scanned by CamScanner

ही हो गया था। उन्होंने रुँआंसे होकर जयमल जी से कहा–"अगर जोग ही लेना था तो फिर तुमने मेरी बेटी से विवाह ही क्यों किया।"

जयमल जी ने दृढ़तापूर्वक कहा–"संयम ग्रहण करने के विचार पर मैं चट्टान की तरह अडिग हूँ। आप सभी कृपाकर मुझे अनुमति प्रदान करें।

सहसा वातावरण गम्भीर हो गया। सभा में सन्नाटा छा गया। सभी अपने-अपने विचारों में खोये हुए थे। इस नीरवता को भंग करते हुए एक नारी स्वर उभरा–"आप तो दीक्षा लेकर संयममार्गी हो जायेंगे, पर मेरा क्या होगा ? आप मुझे भी दीक्षा की आज्ञा प्रदान करवाइये। अब मुझे अनाथ बनाकर किसके भरोसे छोड़े जा रहे हैं ? मैं किसकी शरण.....?"

उपस्थित लोगों ने देखा कि संकट की स्थिति में सारी लाज-शर्म एक ओर रखकर लाछांदेवी अपनी आन्तरिक पीड़ा को व्यक्त कर रही थी।

धीर-गम्भीर जयमल जी ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया–'देवी ! मैं तुमको वचन देता हूँ कि मैं जहाँ भी जाऊँगा वहाँ तुम्हें भी आने दूँगा, मना नहीं करूँगा। मैं मुक्ति-मार्ग पर जा रहा हूँ। तुम भी इस मार्ग को अपना सकती हो, आत्म-कल्याण कर सकती हो। धर्म की जय हो.....!!"

Scanned by CamScanner

घटनाचक्र के इस नवीन मोड़ ने सारे परिदृश्य को अत्यन्त करुण बना दिया था। तभी जयमल जी की वाणी गूँज उठी–''आत्म जागरण हो जाय तो अविलम्ब ही संयम ग्रहण कर लेना चाहिये। विवाह के लिए राजुल के द्वार पर वर-वेश में पहुँचे भगवान अरिष्टनेमि आत्मिक जागरण पाकर तत्काल ही संयम की ओर अग्रसर हो गये थे। जम्बू स्वामी ने आठ पत्नियों का परित्याग कर दीक्षा ले ली थी।''

''यह सच है स्वामी, तो मुझे भी शीघ्र दीक्षा ग्रहण करने की अनुमति दे दें। भगवान अरिष्टनेमि के संग राजुल ने, जम्बूस्वामी के साथ आठों पत्नियों ने भी तो संयम ग्रहण कर लिया था।''

लाछांदेवी के इन शब्दों से तो सभा में हा-हाकार मच गया–''यह क्या होने जा रहा है...? जयमल जी के संकल्प के पीछे तो उनका आत्मिक जागरण है, पर लाछां तो उनका मात्र अनुकरण ही कर रही है। यह कैसे संयम चर्या के कष्टों का सामना कर पाएगी।'' चारों ओर से उसे प्रबोधन मिलने लगे, किन्तु वह तो अपने विचार पर अडिग ही दिखायी दी। बात आगे बढ़े उसके पूर्व ही रियां से आई कुछ महिलाएँ उसे पकड़कर बलपूर्वक स्थानक से बाहर ले आईं। वह बड़बड़ाती रह गयी और उसे धकेलकर बैल गाड़ी में चढ़ा दिया गया। गाड़ी तत्काल ही रियां की ओर रवाना हो गयी।

जयमल जी ने देखा कि इस प्रकार मुझे आज्ञा नहीं मिलगी, तो उन्होंने कठोर प्रतिज्ञा धारण कर ली–''जब तक मुझे दीक्षा की आज्ञा प्राप्त नहीं होती, तब तक मेरे चारों आहार के त्याग रहेगा।''

जयमल जी की अडिगता देख सभी विवश हो गए थे। मेहता मोहनदास जी ने सभी से विचार-विमर्श किया। आज्ञा देने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग शेष न पाकर निश्चय कर लिया कि जयमल जी के सद्विचार को पूर्ण होने दिया जाये।

आचार्यश्री के समीप उपस्थित होकर जयमल जी ने हाथ जोड़कर विनती की–''गुरुवर्य ! सभी ने आज्ञा प्रदान कर दी है। कृपया मुझे दीक्षा प्रदान करें।'' आचार्यश्री ने प्रश्नभरी दृष्टि से मेहता जी की ओर देखा। स्वीकारोक्ति के आशय में सर झुकाते हुए उन्होंने कहा–''पूज्यवर ! जयमल की दृढ़ भावना देखकर हम सबने अनुमति दे दी है। हमारी स्वीकृति है, इसे दीक्षा प्रदान कर अपनी पावन शरण में ले लीजिये प्रभो।''

आचार्य भूधर जी म. सा. ने कहा–''अभी तो संध्या हो गई है, अतः आज दीक्षा मंत्र प्रदान नहीं किया जा सकता।''

जयमल जी कुछ निराश तो हुए, दूसरे ही क्षण आश्वस्त हो गये कि प्रातःकाल होते ही मेरी दीक्षा हो जायेगी।

Scanned by CamScanner

जयमल बने कठोर अभिग्रह धारी :

प्रातः होते ही आवश्यक प्रवृत्ति से निवृत्त हो जयमल जी गुरुदेव के पास पहुँचे। वन्दना कर निवेदन करने लगे—''भगवन् ! अब जल्दी से मुझे दीक्षा मंत्र प्रदान करावें।''

आचार्यश्री भूधर जी म. ने कहा—''देवानुप्रिय ! दीक्षा से पहले श्रमण प्रतिक्रमण कण्ठस्थ करना अनिवार्य है।''

जयमल जी ने कहा—''भगवन् ! यह श्रमण प्रतिक्रमण कितना बड़ा है ?''

आचार्यश्री ने कहा—''हम श्रमण सायं एवं प्रातः दोनों समय प्रतिक्रमण करते हैं, ४८ मिनट का समय लगता है।''

जयमल जी ने संकल्प लेते हुए कहा—''गुरुदेव ! जब तक मुझे प्रतिक्रमण कण्ठस्थ नहीं हो जाता तब तक मैं नीचे नहीं बैठूँगा। आप मुझे प्रतिक्रमण सीखने की आज्ञा दीजिए।''

कठोर अभिग्रह के साथ मात्र ३ घण्टे (एक प्रहर) में, अप्रमत रहने के लिए एक पाँव पर खड़े-खड़े प्रतिक्रमण कण्ठस्थ करके सुना दिया।

आचार्यश्री एवं सभी जन जयमल जी की बुद्धि कौशल एवं धारणा शक्ति से आश्चर्य चकित हो कहने लगे—''यह आत्मा चौथे आरे की बानगी है।''

Scanned by CamScanner

दीक्षा ने खोला—संयम द्वार

'ऐसे अद्‌भुत प्रतिभावान युवक की दीक्षा में अकारण विलम्ब करना अनुपयुक्त होगा।' ऐसा सोचकर मेड़ता के श्रीसंघ ने निर्णय लिया कि आज ही जयमल जी की दीक्षा हो जानी चाहिए। स्थानीय समाज को ऐसे असाधारण वैरागी साधक की दीक्षा का गौरव पाकर अपार हर्ष होने लगा।

दीक्षा महोत्सव के उपलक्ष्य में सारा नगर सुसज्जित हो उठा। मेड़ता शहर के बाहर वट-वृक्ष के नीचे, दीक्षा-स्थल धर्म प्रेमी श्रद्धालुओं से खचाखच भरा था। जयमल जी ने सर्वप्रथम आचार्यश्री की ओर तदनन्तर सर्व साधु-सतियों की श्रद्धापूर्वक वन्दना की। संकेत पाकर परिजन उन्हें ईशान कोण में ले गये। शिखा (चोटी) छोड़कर शेष शीष मुंडित करा उन्हें स्नान करवाकर मुनि वेश धारण करा दिया गया।

इस नव-वेश में उन्होंने आचार्यश्री एवं सर्व सन्तों की विधिपूर्वक प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दना की। आचार्यश्री ने हाथ जोड़कर नमस्कार मंत्र पढ़ना शुरू किया; फिर मांगलिक पाठ सुनाया और जयमल जी से कहा—"अब से अरिहन्त, सिद्ध, साधु और केवली का धर्म ही तुम्हारे लिए शरण रूप है।"

हाथ जोड़कर जयमल जी ने विनती की—"हे उद्धारक गुरुदेव श्री ! आपकी वाणी से ही मुझे आत्म-जागृति मिली है। अब मुझे दीक्षा प्रदान कर अपनी शरण में ले लेने की कृपा कीजिए।"

आचार्यश्री ने दृष्टि उठाकर मेहता परिवार की ओर देखा तो मेहता परिवार उठ खड़ा हुआ। पिताश्री ने सहमति प्रकट की, श्रीसंघ ने भी स्वीकृति दे दी तो आचार्यश्री ने घोषित किया—"जयमल संसारिक बंधन तोड़ने जा रहे हैं।"

आचार्यश्री ने 'इच्छाकारेणं' और उसके पश्चात् 'तस्स उत्तरी करणेणं' का पाठ बोला—वैरागी ने 'इर्यापथिक क्रिया' का कायोत्सर्ग किया। उनकी समाधि की सी भावमुद्रा से दर्शकगण मंत्र-मुग्ध से हो गये। उनके मुखमंडल पर अपूर्व तेज दीप्त हो उठा। लोगस्स बोलने के बाद उन्होंने पुनः सर्व सन्तों को वन्दना की।

"अब इन्हें दीक्षा दी जा रही है—आप सभी की अनुमति है न ?" कहते हुए आचार्यश्री ने पुनः मेहता जी की ओर देख लिया। मेहता जी, महिमा दे, रिडमल, विनयदेवी आदि सभी अपने-अपने स्थान पर खड़े हो गये। हाथ जोड़कर मेहता जी ने निवेदन किया—"हम सभी की सहमति है, पूज्यवर ! अब तो आप ही इनके अभिभावक, संरक्षक और प्रतिपालक हैं।"

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

सभी की दृष्टि अब वैरागी पर टिकी थी। आचार्यश्री ने करेमि भन्ते के पाठ से दीक्षा मंत्र प्रदान किया। गृहस्थावस्था के अन्तिम शेष चिन्ह शिखा केशों का भी उन्हें सबके समक्ष परित्याग करना था। प्रसन्न मुद्रा में उन्होंने पाँच बार केश लोच किया। उनके मुख पर न पीड़ा का भाव, न अधरों पर सिसकारी और न ही आँखों में हल्की सी भी नमी थी।

आचार्यश्री के मार्मिक धर्मोपदेश के उपरान्त नवदीक्षित जयमल जी ने निवेदन किया– ''गुरुवर्य ! मेरी भावना है कि मैं एकान्तर तप करूँ। आहार के दिवस पर भी जब कभी दूज, पंचमी, अष्टमी, एकादशी या चतुर्दशी आ जाय तो उस दिन मैं पंच विगयों (दूध, दही, घी, तेल और मिठाई) का त्याग करूँ। पूज्यवर मुझे इन व्रतों की अनुमति प्रदान करें।''

आचार्यश्री ने उन्हें पच्चक्खाण कराया और स्नेहपूर्वक अपने पास बिठा लिया। वे प्रसन्न थे कि आज उन्हें असाधारण प्रतिभाशाली, तपोनिष्ठ शिष्य मिला, जिसे वे उच्चकोटि के संत के रूप में ढाल सकेंगे।

पुत्र के वैराग्य से प्रेरित माता-पिता ने चउखंध (आजीवन ब्रह्मचर्य, रात्रि-भोजन का, हरियाली का और सचित्त जल का त्याग) व्रत लिया। भाई-भाभी ने जाव-जीवन के बारह व्रत धारण किये। अनेक अन्य श्रावकों ने भी अनेक व्रतों की प्रतिज्ञा ली।

मेड़ता के इतिहास में यह दीक्षा-दिवस मिगसर वद दूज, वि. सं. १७८८, गुरुवार (इससे पूर्व १७८७ दीक्षा संवत जनश्रुति से मानते थे, हस्तलिखित दस्तावेजों पर खोज करने से ज्ञान हुआ कि दीक्षा संवत १७८८ गुरुवार की थी।) धन्य दिवस के रूप में अंकित रहेगा।

दीक्षा के पश्चात् आचार्यश्री तथा नवदीक्षित मुनि श्री जयमल जी एवं अन्य सन्तों के साथ मेड़ता से विहार करने की तैयारी करने लगे। सैंकड़ों श्रावकों के साथ मुनि जयमल जी के संसार पक्ष के माता-पिता, भाई-भाभी भी उपस्थित थे। कल तक वे सभी जयमल जी के लिए पूज्य थे। आज जयमल जी उनके पूज्य हो गये। आज वे सभी उन्हें झुक-झुककर भावभरी वंदना कर रहे थे। जयमल जी ने दीक्षा लेकर, त्याग से अपने आपको बड़ा बना लिया था।

मेहता जी और रिडमल जी के दिल में तो जयमल जी के दीक्षा लेने से गहरा दर्द था; क्योंकि उनको ऐसा लग रहा था कि एक बड़ा सहारा छूट रहा है। महिमा दे का मातृहृदय नैनों से झाँक-झाँककर बार-बार जयमल जी के मुख को निहरता था। कैसे ये विहार करेंगे ? नंगे पाँव बबूल के काँटों वाली धरती पर कैसे चलेंगे ? कैसे संयम पालेंगे ? कहाँ जायेंगे ? पिछले बाईस वर्षों से परिवार से कोई अलग नहीं हुआ था। किसी पर विपत्ति नहीं आई थी; कोई कालग्रस्त नहीं हुआ था। मगर आज उस परिवार का एक अंग अलग हो रहा था।

अपने साधु वेश में चलते नवदीक्षित मुनि श्री जयमल जी म. सा. ऐसे दिखाई दे रहे थे जैसे कोई राजहंस मान सरोवर की यात्रा पर बढ़ रहा हो।

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

विहार का समय होने आया। सभी अहाते के बाहर आ गये। सभी ने जैनधर्म, जिनशासन और आचार्यश्री के जयनाद का घोष किया। हाथ में धर्म शासन का ध्वज प्रतीक रजोहरण पकड़े आचार्यश्री भूधर जी और उनके पीछे-पीछे सभी शिष्य, साधु एवं जनसमुदाय चलने लगा। वह दृश्य अनूठा था।

गाँव की सीमा पार कर सभी सड़क के एक छोर पर पहुँचे और जहाँ वृक्ष की सघन छाया थी उसके नीचे एकत्र हो गये। यहीं से गाँव वालों की वापसी होने वाली थी और महाराजश्री आगे विहार कर जाने वाले थे।

सभी रुक कर खड़े हो गये। महाराजश्री ने मंगलिक सुनायी। सभी ने हाथ जोड़कर सुनी और बाद में वन्दना की। महाराजश्री सभी को "धर्म ध्यान में वृद्धि करो !" का शुभ संदेश देते रहे।

मेहता जी, महिमादेवी, रिडमल जी और विनयदेवी ने भी वंदना की। अब नवदीक्षित मुनि श्री जयमल जी म. सा. उनकी नजरों से अलग होने वाले थे। सभी मौन थे; किन्तु आँखें न जाने क्या-क्या प्रश्न पूछ रही थीं ? महिमादेवी की आँखों में अनेक प्रश्न उभर रहे थे।

अन्त में आचार्यश्री ने मौन भंग करके महिमादेवी से ही कहा—"क्यों, कुछ कहना है...?"

"नहीं, गुरुदेव..... ! आपकी छत्र छाया में दिया है.....अब आप ही इसके सिर के छत्र हैं।" महिमादेवी अधिक न बोल सकी। गला रुँध गया।

सबने हाथ जोड़ लिए। महाराजश्री ने धर्मध्यान का पुनः संदेश दिया और उनके चरण मेड़ता से पूर्व दिशा की ओर अजमेर जाने वाली सड़क पर बढ़ चले। उनके पीछे-पीछे अन्य संत चले। सबसे पीछे थे नवदीक्षित मुनि श्री जयमल जी म. सा.। ऐसा मालूम हो रहा था कि जगत की शान्ति के लिए धर्म-दूत या शान्ति-सैनिक बढ़ते जा रहे थे।

वहीं खड़े रह जाने वालों में थे—मेहता जी, महिमादेवी, रिडमल जी, विनयदेवी और नवदीक्षित मुनि श्री जयमल जी म. सा. के संसार पक्ष के साथी। आगे जाकर मार्ग घूम जाता था। जब तक सभी संत दिखाई दिये सभी खड़े रहे और वे आँखों से ओझल हुए तब तक निहारते रहे। जैसे उनकी आँखें कह रही थीं—"ओ दूर जाने वाले, हमको न भूल जाना।"

□□

मुनि जयमल जी म. सा. के संयममय जीवन गाथा का विस्तारपूर्वक रसास्वादन हम अगले भाग में करेंगे। अधिक विस्तार से जानकारी प्राप्त करने के लिए जयध्वज सचित्र भाग १, २, ३, ४ अवश्य पढ़ें।

चित्रांकन - डा. त्रिलोक शर्मा
प्रोसेसिंग - अरु ग्राफिक्स सर्विसेज, आगरा

Scanned by CamScanner

चमत्कारी जय जाप

पूज्य जयमल जी हुआ अवतारी, ज्यांरा नाम तणी महिमा भारी।
कष्ट टले मिटे ताव तपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
पूज्य नामे सब कष्ट टले, वली भूत-प्रेत पिण नाय छले।
मिले न चोर हुवे गुप-चुपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
लक्ष्मी दिन-दिन बढ़ जावे, वली दुःख नेड़ो तो नहीं आवे।
व्यापार में होवे बहुत नफो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
अड़ियो काम तो हो जावे, वली बिगड़यो काम भी बण जावे।।
भूल-चूक नहीं खाय डफो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
राज-काज में तेज रहे, वली खमा-खमा सब लोक कहे।
आछी जागा जाय रूपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
पूज्य नाम तणो जो लियो ओटो, ज्यारे कदे नहीं आवे टोटो।
घर-घर बारणे काय तपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
एक माला नित्त नेम रखो, किणी बात तणो नहिं होय धखो।
खाली विमाण अरु टलेजी सपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
स्वभक्त तणी प्रतिपाल करे, मुनिराम सदा तुम ध्यान धरे।
कोई परतिख बात मती उथपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
पूज्य नाम प्रताप इसो जबरो, दुख कष्ट-रोग जावे सगरो।
केई भवां रा कर्म खपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।

नोट—इस चमत्कारी जय जाप को नित्य पढ़ने से सम्यक्त्व सुदृढ़ बनता है।

पुस्तक प्राप्ति स्थान :

श्री जयमल जैन पार्श्व पद्मोदय ट्रस्ट
C/o. मोती ज्वैलर्स
78, Millers Road,
Kilpauk, Chennai-10
Ph. : 26422308, 26422309

श्री जय ध्वज प्रकाशन समिति
(शाखा-कार्यालय)
श्रुताचार्य चौथ स्मृति भवन
39, विनोद नगर ब्यावर (राज.)

श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय माउण्ट आबू शिविर ट्रस्ट
C/o, श्री चैनराज जी गोटावत
एम.सी. गोटावत इलेक्ट्रीकल्स,
वी. एस. लेन, चिकपेट, बैंगलोर-53
फोन : 26571898, 26577455

Scanned by CamScanner

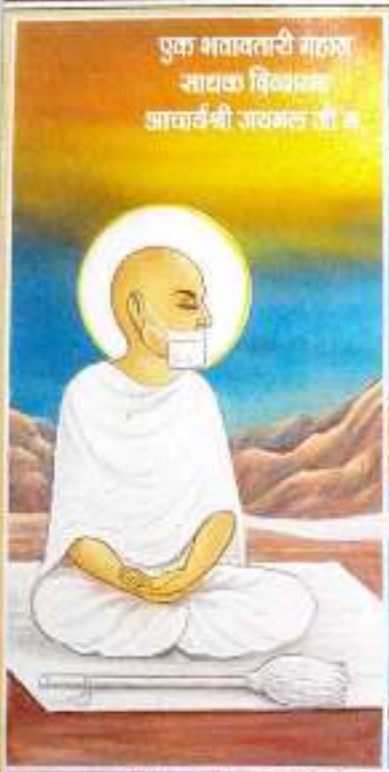

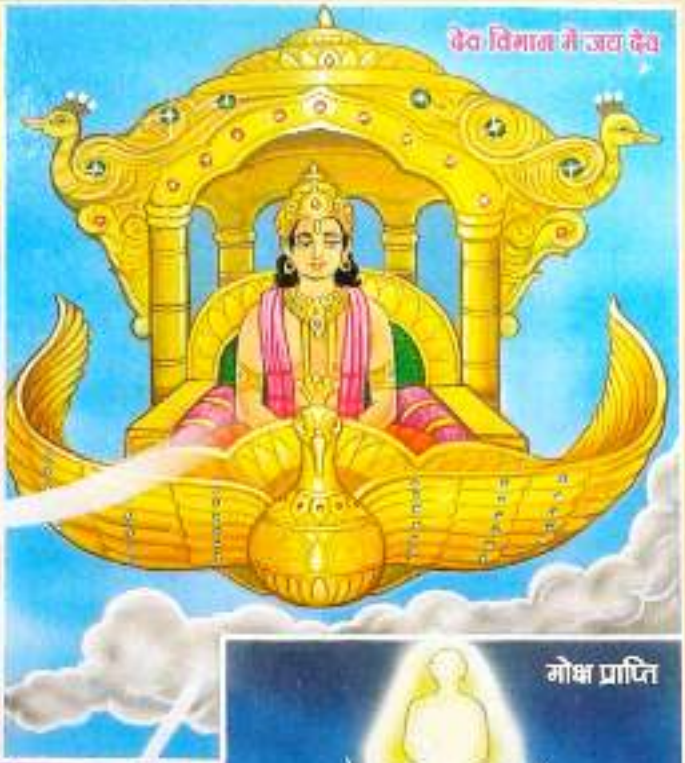

एकभवावतारी आचार्य जय-जीवन प्रकाश

- एक प्रवचन श्रवण मात्र से वैराग्य उत्पन्न होना। ३ घण्टे (१ प्रहर) में खड़े-खड़े प्रतिक्रमण कंठस्थ करना।
- १६ वर्ष तक एकान्तर तप, १६ वर्ष बेले-बेले तप, २० मासक्षमण तप, १० द्वि-मासक्षमण तप, ४० अट्ठाई तप, ६० दिन अभिग्रह-युक्त तपस्या, एक बार चौमासी तप, एक बार छह मासी तप, २ वर्ष तक तेले-तेले पारणा, ३ वर्ष ५ के पारणे। ५ की तपस्या।
- ५० वर्ष तक आड़ा आसन नहीं करना वि. सं. १८०४ से वि. सं. १८५३ तक।

  ८ दिन तक निराहार रहते हुए बीकानेर में ५०० यतियों को चर्चा में परास्त कर सदा के लिए जैन सन्तों हेतु सर्वप्रथम क्षेत्र खोला।
- पीपाड़ नागौर, जैसलमेर, बीकानेर, सांचौर, खींचन, फलोदी, सिरोही, जालोर आदि अनेकानेक क्षेत्रों में यतियों को चर्चा में परास्त कर क्षेत्र खोले।
- जोधपुर, बीकानेर, जयपुर, नागौर, जैसलमेर आदि के राजा- महाराजाओं एवं दिल्ली के बादशाह मोहम्मद शाह तथा उनके शाहजादा को प्रतिबोध देकर सुमार्गी बनाया।
- ७५० भव्यात्माओं को दीक्षा दी। ५१ शिष्य, २०० प्रशिष्य, ४६६ साध्वी समुदाय।
- वि. सं. १८०७ में बड़ी साधु वन्दना की रचना की। इसके अतिरिक्त २५० से अधिक काव्य कृतियों का निर्माण किया।
- अपने जीवनकाल में २ वर्ष पूर्व (वि. सं. १८५१ से १८५३) आचार्य पद उत्तराधिकारी को देकर आत्म समाधि में लीन बने।
- संथारे के सोलहवें दिन मध्य रात्रि में उदय (मुनि) केशव (मुनि) ने देवपर्याय में से आकर वन्दन किया, पूर्ण प्रकाश को देखकर आचार्य श्री रायचन्दजी म. सा. आदि सन्तों के पूछने पर सिमन्धरस्वामी से समाधान पाया कि पूज्य श्री एकभवावतारी हैं। प्रथम कल्प देवलोक से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में जाकर मोक्ष में जायेंगे।

प्रकाशक : श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय प्रकाशन ट्रस्ट, बैंगलोर

Scanned by CamScanner